# वनस्पति वाणी

वर्ष 12 सितम्बर 2002 अंक 11

## भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

स्पाइडर आर्किड (छाया चित्रः पी वी श्रीकुमार)

यूरेरिया पिक्टा(जैक.) डेस्व. एक्स डी. सी.
(छाया चित्रः पी वी श्रीकुमार)

केनेवेलिया विरोसा (रॉक्सब.) वाईट एंड अर्नाट (छाया चित्रः पी वी श्रीकुमार)

# वनस्पति वाणी

वर्ष 12 | सितम्बर 2002 | अंक 11

वसुधेति च शीतेति पुण्यदेति धरेति च
नमस्ते सुभगे देवि द्रुमोऽयं वर्धतामिति

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

इस प्रकाशन का कोई अंश निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के लिखित पुर्वानुमति के बिना पुनप्रवर्तित/रिट्रिवल पद्धति से भण्डारण या इलेक्ट्रानिक, मेकेनिकल फोटोकापी, रिकार्डिंग या अन्य किसी तरीके से ट्रांसमिट नहीं किया जा सकता है।

| | | |
|---|---|---|
| डा० हर्ष चौधरी | : | सम्पादक |
| नवीन चौधरी | : | सहायक सम्पादक |

वनस्पति वाणी में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, प्रामाणिकता एवं व्यक्त विचारों के लिए लेखक उत्तरदायी है।

इस अंक के प्रूफ संशोधन, मुद्रण क्रम में हिन्दी एवं प्रकाशन अनुभाग के सभी कर्मचारियों ने सक्रिय सहयोग प्रदान किए हैं।

मुखपृष्ठ का चित्र : मूसा वेलूटीना वेन्डल. एवं ड्रूड (चित्रः हर्ष चौधरी)

# विषय सूची


| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | पूर्वोत्तर भारत के सामबद्ध पर्णांग– एक अवलोकन | : रामदास दीक्षित एवं श्वेता सिंह: | 1 |
| 2. | पूर्वोत्तर भारत में आर्डर–डिस्कोनिएल्स के वृक्षीय पर्णांग एक विवेचना | : रामदास दीक्षित एवं विनीत कुमार रावत | 33 |
| 3. | नवग्रह से सम्बन्धित पौधे | : रामदास दीक्षित एवं उमाशंकर वैश्य | 39 |
| 4. | केला एक : गुण अनेक | : हर्ष चौधरी | 42 |
| 5. | उत्तरांचल राज्य की वनस्पति | : सर्वेश कुमार | 47 |
| 6. | गढवाल हिमालय में पर्यावरण एवं पादप संरक्षण | : ए. ए. अन्सारी, आर सी श्रीवास्तव, एवं एच सी पाण्डेय | 50 |
| 7. | अरूणाचल प्रदेश की वनस्पति विविधता | : एस एल गुप्त | 52 |
| 8. | मकड़ी सदृश पुष्पीय पौंधा ( स्पाईडर आर्किड ) | : पी वी श्रीकुमार, विनोद मैना, एवं भोलानाथ | 55 |
| 9. | पेटेंट नियमों का भारत की वनस्पति विविधता पर प्रभाव | : देवयानी बसु | 57 |
| 10. | अश्वत्थ (पीपल) एक धार्मिक वृक्ष | : उमा शंकर वैश्य | 59 |
| 11. | भारत की श्रेष्ठतम वनस्पति औषधि ''हरड़'' (टर्मिनेलिया चेब्युला) | : सुखसागर | 62 |
| 12. | परमारथ के कारने वृक्षन धरा शरीर | : रेशमा माथुर | 65 |
| 13. | लेग्युम्स : मृदा, पशु व मानव के पालन पोषण की दृष्टि में | : पी वी श्रीकुमार एवं मो० शरीफ | 68 |
| 14. | पर्यावरण प्रदूषण और हम | : रूपाली प्रशान्त कुलकर्णी | 71 |
| 15. | भूटान : पर्यटक के दृष्टिकोण से | : विजय कृष्ण | 77 |
| 16. | पर्यावरण समाचार (संकलन) | : संजीव कुमार | 80 |
| 17. | प्रदूषण का बढता मायाजाल (कविता) | : भोलानाथ | 84 |

# पूर्वोत्तर भारत के सामबद्ध-पर्णांग (FERN-ALLIES) एक अवलोकन

*रामदास दीक्षित एवं कु० श्वेता सिंह,*
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मध्य क्षेत्र,*
*इलाहाबाद (उ० प्र०)*

प्रस्तावना – भारतवर्ष का पूर्वोत्तर क्षेत्र भौगोलिक रूप से लगभग 2,55,050 वर्ग किमी० के क्षेत्र में विस्तारित है। यह पूरा क्षेत्र सात राज्यों–अरूणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैण्ड एवं त्रिपुरा का संगठित रूप है। पूर्वोत्तर भारत को वानस्पतिक वितरण के आधार पर मुख्य रूप से कमशः दो भागों में विभाजित किया गया हैः पूर्वी भारत क्षेत्र तथा पूर्वी हिमालय के क्षेत्र, अरूणाचल प्रदेश के मैदानी भाग, असम, त्रिपुरा, मणिपुर, नागालैण्ड, मिजोरम व मेघालय को पूवीभारत जबकि अरूणाचल के पहाड़ी क्षेत्र पूर्वी हिमालय के अंतर्गत माने गये है।

सम्पूर्ण पूर्वोत्तर-भारत क्षेत्र अत्यधिक नमी व वर्षा वाला स्थान घोषित किया गया है। इसके अधिकांश भागों में 2000 मिमि० से भी अधिक की वर्षा होती है। इन भागों में लगभग 5000 मी० तक की ऊंचाई वाली पर्वत-श्रेणियों का विस्तार है। अतः यह उष्ण-आर्द्रता वाले वन-क्षेत्र पर्णागों तथा सामबद्ध-पर्णांगों के आवास के लिए स्वाभाविक क्षेत्र माने जाते हैं। अतः पूरा पूर्वोत्तर क्षेत्र निम्न अपुष्पी पौधों का खजाना है। यहाँ इनकी जातियों की प्रचुरता तथा विविधता देखी जा सकती है।

सामबद्ध-पर्णांगों के अध्ययन में भारतीय वैज्ञानिकों के साथ-साथ विदेशी वैज्ञानिकों का भी अति महत्वपूर्ण और प्रशंसनीय योगदान रहा है। पर आज भी निम्न तथा अपुष्पी पौधों के अध्ययन में कार्य न के बराबर हुआ है, यह कहना अतिशयोक्ति न होगी ।

पर्णांगोद्भिद प्रभाग के ये पौधे बीजाणुधारी एवं संवहन तंत्र वाले होते है। इनके अंतर्गत पूर्वोत्तर भारत में पाई जाने वाले वंश मुख्यतः *ह्रयुपरजिया, सिलैजिनेला, लाइकोपोडियम, साइलोटम, फलेम्मेरियूरस, पालहीनिया आदि हैं। इनमें प्रमुख रूप से सिलैजिनैला* पर बेकर (1887) आल्सटन (1945) पानिग्रही एवं दीक्षित (1966, 67, 68) एवं दीक्षित (1977, 1992) ने कार्य किया है। इन पौधों के अध्ययन में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के वैज्ञानिकों का योगदान अमूल्य है। सन् 1966 ई० के बाद से आज तक क्ई शोधपत्र एवं पुस्तकों का असीम योगदान लगातार इस विषय के अध्ययन में हो रहा है।

सामबद्ध-पर्णांग अपने विशिष्ट, सुंदर एवं आकर्षक, विलक्षण, प्रपर्ण की अकारिकी के कारण

सदैव ही पादप वैज्ञानिकों एवं प्रकृतिविदों को अपनी ओर आकर्षित करते रहे हैं। फिर भी स्थिति यह है कि, भारत में आज भी ऐसे क्षेत्र हैं, जहाँ से इनका संग्रह नही हुआ हैं। इनमें विशेषकर पूर्वोत्तर-भारत के मैदानी तथा पर्वतीय भाग आते हैं। इन क्षेत्रों से सामबद्ध-पर्णांगों की क्ई नई जातियों की खोज की सम्भावना से इंकार नही किया जा सकता।

सामबद्ध-पणागों पर प्रस्तुत यह लेख ''पूर्वोत्तर-भारत के सामबद्ध-पर्णाग एक अर्वलोकन'' अब तक प्रकाशित जानकारियों, पादपालय इलाहावाद स्थित वनस्पति सर्वेक्षण संस्थान (BSA) एवं केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय, कोलकता (CAL) को आधार लेकर लिखा गया है। क्योंकि इस क्षेत्र में बहुत सीमित कार्य हुआ है। इसलिए प्रस्तुत लेख में पूर्वोत्तर-भारत के सामबद्ध-पर्णाग का अवलोकन किया गया है।

आशा कीजाती है कि प्रस्तुत लेख वैज्ञानिकों एवं प्रकृतिविदों को इस क्षेत्र में सामबद्ध-पर्णागों की जानकारी देने के साथ-साथ और गहन अध्ययन का प्रेरणास्त्रोत होगा।

तालिका–I

पूर्वोत्तर-भारत में सामबद्ध-पर्णांग का संख्यात्मक-विश्लेषण

| कम सं० | कुल | वंश | जातियां |
|---|---|---|---|
| 1 | 5 | 9 | 58 |

तालिका - II

पूर्वोत्तर-भारत के सामबद्ध-पणाग

| कम सं० | कुल | वंश | जातियां |
|---|---|---|---|
| 1. | ह्रयुपरजियेसी | 2 | 14 |
| 2. | लाइकोपोडियेसी | 4 | 7 |
| 3. | सिलेजिनेलैसी | 1 | 35 |
| 4. | इक्वीसीटेसी | 1 | 1 |
| 5. | साइलोटेसी | 1 | 1 |
| 6. | आइसोइटेसी | – | – |

तालिका-III

पूर्वोत्तर-भारत के सामबद्ध-पणाग एक दृष्टि में

| कम० सं० | वंश | जातियाँ |
|---|---|---|
| 1. | *ह्युपरजिया* | *कानसीलाटा* |
| 2. | *ह्युपरजिया* | *साइलेनिका* |
| 3. | *ह्युपरजिया* | *क्रिप्टोमेरिना* |
| 4. | *ह्युपरजिया* | *हैमिल्टोनिआई* |
| 5. | *ह्युपरजिया* | *हरटेरियाना* |
| 6. | *ह्युपरजिया* | *पेटियोलाटा* |
| 7. | *ह्युपरजिया* | *पल्वेरिमा* |
| 8. | *ह्युपरजिया* | *सिलागो* |
| 9. | *ह्युपरजिया* | सिराटा |
| 10. | *ह्युपरजिया* | *स्क्वारोजा* |
| 11. | *ह्युपरजिया* | *सुबलीफोलिया* |
| 12. | *ह्युपरजिया* | *दीक्षीतिआना* |
| 13. | *फ्लग्मेरियूरस* | *फ्लग्मेरिया* |
| 14. | *फ्लग्मेरियूरस* | *फाईलेन्थस* |
| 15. | *लाइकोपोडियम* | *एन्नोटिनम* |
| 16. | *लाइकोपोडियम* | *जैपोनिकम* |
| 17. | *लाइकोपोडियम* | *वाईचिआई* |
| 18. | *डाईफैसीऐस्ट्रम* | *एल्पाइनम* |
| 19. | *डाईफैसीऐस्ट्रम* | *कमप्लानाटम* |
| 20. | *लाइकोपोडिऐस्ट्रम* | *कैजुयेराइनोआइडिस* |

| कम० सं० | वंश | जातियाँ |
|---|---|---|
| 21. | *पालहीनिया* | *सरनुआ* |
| 22. | *सिलैजिनैला* | *इण्डिका* |
| 23. | *सिलैजिनैला* | *प्युबीसेन्स* |
| 24. | *सिलैजिनैला* | *बाइफोरमिस* |
| 25. | *सिलैजिनैला* | *विलडिनोविआई* |
| 26. | *सिलैजिनैला* | *हेल्फेरी* |
| 27. | *सिलैजिनैला* | *ब्रायोप्टेरिस* |
| 28. | *सिलैजिनैला* | *इनवॉल्वेन्स* |
| 29. | *सिलैजिनैला* | *पेन्टागोना* |
| 30. | *सिलैजिनैला* | *सेमीकारडाटा* |
| 31. | *सिलैजिनैला* | *प्रीटरमीसा* |
| 32. | *सिलैजिनैला* | *नेपालियन्सिस* |
| 33. | *सिलैजिनैला* | *माइटिनिआई* |
| 34. | *सिलैजिनैला* | *वाजीनाटा* |
| 35. | *सिलैजिनैला* | *रेपाण्डा* |
| 36. | *सिलैजिनैला* | *डैलीकाटुला* |
| 37. | *सिलैजिनैला* | *इनइक्राफोलिया* |
| 38. | *सिलैजिनैला* | *हूकरी* |
| 39. | *सिलैजिनैला* | *वालीचिआई* |
| 40. | *सिलैजिनैला* | *पिक्टा* |
| 41. | *सिलैजिनैला* | *पालीडिसिमा* |

| कम० सं० | वंश | जातियाँ |
|---|---|---|
| 42. | *सिलैंजिनैला* | *पिन्नाटा* |
| 43. | *सिलैजिनैला* | *बाइसल्काटा* |
| 44. | *सिलैजिनैला* | *रेटिकुलाटा* |
| 45. | *सिलैजिनैला* | *काईसोराइजोस* |
| 46. | *सिलैजिनैला* | *कुरजिआई* |
| 47. | *सिलैजिनैला* | *सिलिऐरिस* |
| 48. | *सिलैजिनैला* | *माइन्युटीफोलिया* |
| 49. | *सिलैजिनैला* | *वाटिआई* |
| 50. | *सिलैजिनैला* | *डेसीपियेन्स* |
| 51. | *सिलैजिनैला* | *मेगाफाइला* |
| 52. | *सिलैजिनैला* | *मोनोस्पोरा* |
| 53. | *सिलैजिनैला* | *आरनाटा* |
| 54. | *सिलैजिनैला* | *काइसोकाउलोस* |
| 55. | *सिलैजिनैला* | *सबडियाफाना* |
| 56. | *सिलैजिनैला* | *टेन्युआईफोलिया* |
| 57. | *इक्वीसिटम* | *डिफ्यूसम* |
| 58. | *साइलोटम* | *नूडम* |

**स्थानिकता** – किसी स्थान विशेष की वनस्पति का महत्व और वैज्ञानिक के लिए उसका आकर्षण वहाँ व्याप्त स्थानिक जातियों के कारण और बढ़ जाता है। पूर्वोत्तर-भारत में सामबद्ध-पर्णाग की स्थानिक जातियां चार (4) है। संरक्षण की दृष्टि से इन्हें प्राथमिकता देनी चाहिये क्योंकि इनके आवासों के लिए थोड़ी सी बाधा भी इनके विनाश का कारण बन सकती है। क्ई स्थानिक जातियों को हम केवल एक ही बार एक विशेष स्थान से ही प्राप्त कर सकते हैं। क्षेत्रानुसार स्थानिक जातियों की सूची निम्नलिखित है।

तालिका-IV

पूर्वोत्तर-भारत की स्थानिक सामबद्ध-पर्णाग जातियां

| कम सं० | वंश | जाति | वितरण क्षेत्र |
|---|---|---|---|
| १ | *ह्यूपरजिया* | *दीक्षीतिआना* | उत्तरी सिक्किम (लाचुंग घाटी) |
| २ | *ह्यूपरजिया* | *पेटियोलेटा* | मेघालय |
| ३ | *सिलैजिनैला* | *पेन्टागोना* | पूर्वोत्तर-भारत (अरूणाचल, मेघालय, असम) |
| ४ | *सिलैजिनैला* | *पालीडिसिमा* | अरूणाचल, जम्मू, उ० प्र०, हिमाचल प्रदेश |

**दुर्लभ तथा संकट ग्रस्त जातियां–** आज वनों के विनाश के कारण पर्णागोद्भिद वनस्पतिजात में उष्णकटिबन्धीय, उपोष्ण-कटिबन्धीय, शीतोष्ण एवं हिमानी जातियों की संख्या तीव्रता से घट रही है। पूर्वोत्तरा-भारत की ही स्थिति पर नजर डालें तो हम पायेंगे कि जिन स्थानों पर जहाँ कभी पर्णाग एवं सामबद्ध-पर्णागों की विविधता एवं प्रचुरता थी, आज वहां इनके आवासों के नष्ट हो जाने के कारण, संख्या में आश्चर्यजनक कमी आई है। इन क्षेत्रों में ओक के वृक्षों के कटान के कारण सामबद्ध-पर्णागों की क्ई जातियां दुर्लभ एवं संकटग्रस्त जातियों की श्रेणी में आ चुकी हैं। क्ई तो विलुप्त होने के कगार पर आ चुकी है। आज सब से दु:ख का बिषय यह है कि जैसे-जैसे हम नई जातियों के विषय में जानकारी प्राप्त कर रहे है वही दूसरी ओर वनों के लगातार कटान, भूस्खलन, बाढ़ या सूखे से पर्यावरण असन्तुलित हो रहा है और तापक्रम भी निरन्तर बढ़ रहा है। तापमान-परिवर्तन पर्णाग तथा सामबद्ध-पर्णागों के जीवनचक्र की सारी घटनाओं तथा परिणामस्वरूप उनकी संख्या में वृद्धि या कमी को प्रभावित करता है। अत: पर्णागोद्भिद की अनेक जातियां निरन्तर प्रभावित हो रही है, और बहुतायत से पायी जाने वाली जातियाँ भी दुर्लभ एवं संकटग्रस्त होती जा रही है।

पूर्वोत्तर भारत में अरूणाचल, आसाम, मणिपुर जैसे क्षेत्रों से बहुत आशायें है, क्योंकि अभी भी यह क्षेत्र प्राकृतिक घने वनों से आच्छादित है, अत: यहाँ कई रूचिकर पर्णाग तथा सामबद्ध-पर्णागों की जातियों की सुरक्षा तथा संरक्षण की प्रबल सम्भावनायें हैं।

यदि हम दुर्लभ व संकटग्रस्त जातियों की सूची तैयार करें तो उनकी संख्या लगभग 25 होगी। किन्तु हमारा ध्यान उन जातियाँ पर विशेष रूप से होना चाहिये जो सबसे अधिक संकटग्रस्त है, और विलुप्त होने वाली जातियों की श्रेणी के अंतर्गत आती है। जैसे– *साइलोटम, लाइकोपोडियम, सिलैजिनैला* की जातियाँ आदि। इनकी निरन्तर कम होती संख्या चिन्ता का विषय है। वन क्षेत्र में कमी आने से

छायादार स्थानों पर उगने वाले सामबद्ध-पर्णागों तथा अन्य पर्णागों की जातियां विशेषरूप से संकट में है। पूर्वोत्तर-भारत की कुछ विरल (दुर्लभ)एवं संकटग्रस्त जातियाँ, जिन्हें संरक्षण हेतु चुना जा सकता है, निम्नलिखित है–

तालिका –V

पूर्वोत्तर-भारत में दुर्लभ (विरल) एवं संकटग्रस्त सामबद्ध-पर्णाग

| कम सं० | वंश | जातियाँ | वितरण क्षेत्र |
|---|---|---|---|
| 1. | *डाईफैसिऐस्ट्रम* | *एल्पाइनम* | सिक्किम, उत्तरीध्रुवीय भाग, दोनों अर्द्ध-गोलार्द्धो में शीतोष्ण कटिबन्धित क्षेत्रों में। |
| 2. | *डाईफैसिऐस्ट्रम* | *कमप्लानाटम* | भारत (मेघालय, तमिलनाडु) उत्तरी शीतोष्ण, अल्पाईन भाग। |
| 3. | *ह्यूपरजिया* | *कानसीलाटा* | भारत (अरूणाचल प्रदेश) भूटान। |
| 4. | *ह्यूपरजिया* | *क्रिप्टोमेरिना* | भारत (अरूणाचल प्रदेश) जापान। |
| 5. | *ह्यूपरजिया* | *साइलेनिका* | भारत (मेघालय, तमिलनाडु) जावा,श्रीलंका। |
| 6. | *ह्यूपरजिया* | *दीक्षितिआना* | भारत (सिक्किम)। |
| 7. | *ह्यूपरजिया* | *हरटेरियाना* | भारत (सिक्किम, मणिपुर, पश्चिम बंगाल) चीन। |
| 8. | *ह्यूपरजिया* | *पेटियोलाटा* | भारत (मेघालय)। |
| 9. | *ह्यूपरजिया* | *सलागो* | भारत (अरूणाचल, असम, मेघालय, सिक्किम, मणिपुर) नेपाल, चीन,जापान, श्रीलंका। |
| 10. | *लाइकोपोडियम* | *एन्नोटिनम* | भारत (उ० प्र०, सिक्किम, मेघालय, शीतोष्ण कटिबन्धित भाग। |
| 11. | *लाइकोपोडियम* | *वाईचिआई* | भारत (सिक्किम, अरूणाचल प्रदेश) चीन, जापान। |
| 12. | *लाइकोपोडिऐस्ट्रम* | *कैजुऐराइनोआइडिस* | भारत (असम, मेघालय, मणिपुर, भूटान) बर्मा, चीन, मलाया, आईसलैण्ड, फिलिपिन्स, आईसलैण्ड। |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 13. | *सिलैजिनैला* | *आरनाटा* | भारत (अरूणाचल, मेघालय) मालिसाइएन आईसलैण्ड। |
| 14. | *सिलैजिनैला* | *काईसोराइजोस* | भारत (असम, पश्चिम बंगाल), नेपाल, बर्मा, अन्नाम, लाओस। |
| 15. | *सिलैजिनैला* | *कुरजिआई* | भारत (असम), नेपाल, मलाया पेनिनसुला। |
| 16. | *सिलैजिनैला* | *मेगाफाइला* | भारत (अरूणाचल, असम) भूटान, बर्मा। |
| 17. | *सिलैजिनैला* | *माइन्यूटीफोलिया* | भारत (असम), बर्मा, मलाया। |
| 18. | *सिलेजिनेला* | *माइटिनिआई* | (मेघालय) भारत, आफ्रीका। |
| 19. | *सिलैजिनैला* | *प्रीटरमीसा* | भारत (अरूणाचल), श्रीलंका। |
| 20. | *सिलैजिनैला* | *प्यूबीसेन्स* | भारत (असम), सिआम, इन्डो-चाइना। |
| 21. | *सिलैजिनैला* | *रेटिकुलाटा* | भारत (अरूणाचल, मेघालय), बर्मा। |
| 22. | *सिलैजिनैला* | *टेन्यूआइफोलिया* | भारत (अरूणाचल, पश्चिम बंगाल), बर्मा, लाओस, सिआम। |
| 23. | *सिलैजिनैला* | *वाटिआई* | भारत (मणिपुर), बर्मा। |
| 24. | *सिलैजिनैला* | *विलडिनोविआई* | भारत (अरूणाचल, असम, हिमालय) बर्मा, मलाया, मलेशिया प्रायद्वीप। |
| 25. | *साइलोटम* | *नूडम* | भारत का सम्पूर्ण पर्वतीय क्षेत्र, बर्मा, मलेशियन भाग। |

## तालिका-VI

पूर्वोत्तर-भारत में प्रचुरता से पाई जाने वाली सामबद्ध-पर्णांगों की जातियां

| कम सं० | वंश | जातियाँ | वितरण क्षेत्र |
|---|---|---|---|
| 1. | *इक्वीसिटम* | *डिप्यूसम* | भारत (सिक्किम, हिमालय के पर्वतीय भाग, असम, मेघालय), नेपाल, बर्मा, भूटान, चीन। |

| कम सं० | वंश | जातियाँ | वितरण क्षेत्र |
|---|---|---|---|
| 2. | *लाईकोपाडियम* | *जैपोनिकम* | पूर्व भारत में पर्वतीय क्षेत्रों में नेपाल, भूटान, चीन। |
| 3. | *पालहीनिया* | *सरनुआ* | पूर्व भारत में पर्वतीय क्षेत्रों में, दोनों अर्द्धगोलार्द्ध मे उष्ण कटिबन्धित भागों में। |
| 4. | *फ्लेग्मेरियूरस* | *फाइलेन्थस* | भारत (उ० प्र०,अरूणाचल, पश्चिम बंगाल, सिक्किम, असम, मणिपुर, मेघालय, केरल, तामिलनाडु) अफोका,अमेरिका। |
| 5. | *फ्लेग्मेरियूरस* | *फ्लेग्मेरिया* | भारतीय पूर्वोत्तर भाग, केरल, अस्ट्रेलिया। |
| 6. | *ह्युपरजिया* | *हैमिल्टोनिआई* | सम्पूर्ण पर्वतीय क्षेत्रों में (भारत), चीन, मलेशियन, आईसलैण्ड, बर्मा, श्रीलंका। |
| 7. | *ह्युपरजिया* | *स्क्वारोसा* | भारत (पश्चिम बंगाल, सिक्किम, मेघालय, असम, केरल) नेपाल, बर्मा, बंगलादेश, श्रीलंका। |
| 8. | *ह्युपरजिया* | *सुबलीफोलिया* | भारत (पश्चिम बंगाल, मेघालय, असम, यू०पी०), नेपाल, श्रीलंका। |
| 9. | *ह्युपरजिया* | *सिराटा* | भारत (पश्चिम बंगाल, सिक्किम, अरूणाचल, असम, मेघालय, मणिपुर, तमिलनाडु), नेपाल, बर्मा। |
| 10. | *ह्युपरजिया* | *फ्ल्वेरिमा* | भारत (पूरा पूर्वोत्तर भारत), नेपाल, भूटान, चीन। |
| 11. | *सिलैजिनैला* | *बाइफोरमिस* | भारत (असम, मेघालय, नागालैण्ड,मणिपुर), सुमात्रा, बर्मा, जावा, दक्षिण चीन, फिलिपिन्स। |
| 12. | *सिलैजिनैला* | *बाइसल्काटा* | भारत (हिमाचल प्रदेश, सिक्किम, नागालैण्ड, मणिपुर, मेघालय, पश्चिम बंगाल) चीन, बर्मा। |
| 13. | *सिलैजिनैला* | *ब्रायोप्टेरिस* | पूर्व भारत का पहाड़ी क्षेत्र, बिहार,यू०पी०, एम० पी०, उड़ीसा, तमिलनाडु। |

| कम सं० | वंश | जातियाँ | वितरण क्षेत्र |
|---|---|---|---|
| 14. | *सिलैजिनैला* | *काईसोकाउलोस* | भारत (मेघालय, मणिपुर, अरूणाचल, नागालैण्ड, सिक्किम, हिमाचल, केरल),नेपाल, भूटान। |
| 15. | *सिलैजिनैला* | *सिलिऐरिस* | भारत (सिक्किम, मेघालय, असम, अरूणाचल, नीकोबार, उड़ीसा, त्रिपुरा, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, केरल) बर्मा, श्रीलंका, चीन। |
| 16. | *सिलैजिनैला* | *डेसीपियेन्स* | भारत (अरूणाचल, असम, मिजोरम, मेघालय) टोनकिंन, इण्डो-चीन। |
| 17. | *सिलैजिनैला* | *डैलीकाटुला* | भारत (सिक्किम, असम, त्रिपुरा, केरल, मेघालय, गोवा, महाराष्ट्र, निकोबार) चीन, सियाम, कम्बोडिया। |
| 18. | *सिलैजिनैला* | *हूकरी* | भारत (अरूणाचल, असम, नागालैण्ड, मणिपुर, मेघालय) बर्मा, इण्डो-चाइना, अन्नाम, मलाया-पेनिनसुला। |
| 19. | *सिलैजिनैला* | *हैल्फरी* | भारत (अरूणाचल, असम, नागालैण्ड, मणिपुर, मेघालय, अण्डमान निकोबार),बर्मा, चीन। |
| 20. | *सिलैजिनैला* | *इनइक्वफोलिया* | भारत (असम, तमिलनाडु )केरल, बर्मा |
| 21. | *सिलैजिनैला* | *इनवाल्वैन्स* | भारत (पर्वतीय भाग), नेपाल, भूटान, बर्मा, श्रीलंका, चीन, मलेसिया। |
| 22. | *सिलैजिनैला* | *इण्डिका* | भारत (अरूणाचल, बिहार, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, यू०पी० पश्चिम बंगाल) नेपाल, भूटान। |
| 23. | *सिलैजिनैला* | *मोनोस्पोरा* | भारत (सिक्किम, अरूणाचल, मेघालय, असम, मणिपुर, केरल) बर्मा, चीन, टोंनकिंन। |
| 24. | *सिलैजिनैला* | *नेपालियेन्सिस* | भारत (अरूणाचल, मणिपुर,) नेपाल |
| 25. | *सिलैजिनैला* | *पिक्टा* | भारत (अरूणाचल, असम, मणिपूर, नागालैण्ड,) बर्मा । चीन, इण्डो-चाइना, लाओस। |

| कम सं० | वंश | जातियाँ | वितरण क्षेत्र |
|---|---|---|---|
| 26. | *सिलैजिनैला* | *पालीडिसिमा* | भारत (यू०पी०, हिमाचल, अरूणाचल जम्मू ) |
| 27. | *सिलैजिनैला* | *पिन्नाटा* | भारत (अरूणाचल, असम, मेघालय), बर्मा, सियाम। |
| 28. | *सिलैजिनैला* | *पेन्टागोना* | भारत (अरूणाचल, असम, मेघालय,) बर्मा, सियाम। |
| 29. | *सिलैजिनैला* | *रेपाण्डा* | सम्पूर्ण भारत, नेपाल, बर्मा, चीन, जावा, सुमात्रा, सियाम, फिलिपिंन्स, अननाम, टांनकिन। |
| 30. | *सिलैजिनैला* | *सबडियाफाना* | भारत (मेघालय, नागालैण्ड, हिमाचल, पंजाब, यू०पी०, नेपाल) |
| 31. | *सिलैजिनैला* | *सेमीकारडाटा* | भारत (सिक्किम, अरूणाचल, असम, त्रिपुरा, बिहार), बर्मा, मलाया, बंगलादेश। |
| 32. | *सिलैजिनैला* | *वाजीनाटा* | सम्पूर्ण भारतीय पर्वतीय क्षेत्र, बर्मा, चीन। |
| 33. | *सिलैजिनैला* | *वालीचिआई* | भारत( अरूणाचल, असम, नागालैण्ड, मणिपुर, मेघालय) बर्मा, लाओस, मलाया कोलम्बिया। |

तालिका-VII

**( पूर्वोत्तर-भारत के सामबद्ध-पर्णागों के कुल जिनमें पांच से अधिक जातियाँ है। )**

| कम० सं० | कुल | जातियाँ |
|---|---|---|
| 1. | सिलैजिनेलैसी | 35 |
| 2. | ह्रयुपरजियेसी | 14 |
| 3. | लाइकोपीडियेसी | 7 |

संरक्षण– भारत के वनों से लगातार इन पौधों का विरल एवं संकटाग्रस्त होना, एक बड़ी समस्या बन गई है। पूर्वोत्तर-भारत के अधिकांश क्षेत्रों में वनों के अंचलों मे रहने वाले लोगों के द्वारा चारे, ईधन, तथा प्राकृतिक खाद के रूप में उपयोग हेतु, वनों का कटाव बहुतायत से निरन्तर हो रहा है। जहाँ तक पर्णागों व सामबद्ध-पंर्णागों का प्रश्न है, इनका जीवन-चक्र वनों के सहारे ही चलता है। अतः तब तो इस

तीव्र गति से हो रहे वनों के कटान को रोकना और भी आवश्यक हो जाता है। पुष्पी उच्च पौधों को ही नही वरन् अपुष्पी निम्न पौधों को बचाना तथा उनका उचित संरक्षण भी अति आवश्यक है। इन पौधों के संरक्षण के लिए वही विधियाँ लागू होती है जो पुष्पी पौधों के लिए है। *साइलोटम, लाइकोपीडियम, सिलैजिनैला* की अनेक दुर्लभ जातियाँ लुप्त होने की कगार पर है। इसका मुख्य कारण यह भी है कि विद्यार्थी तथा शोधकर्ता, इन दुर्लभ जातियों को अध्ययन और शोधकार्यों हेतु एकत्र करते है। इस प्रकार के अभ्यासों को कम करके हमारे विद्यार्थी साथी तथा अध्यापकगण इनका संरक्षण करने में सहायक भूमिका निभा सकते है। दुर्लभ स्थानिक एवं रूचिकर जातियों को पूरे देश के विभिन्न वनस्पति उद्यानों में लगाकर बचाया जा सकता है, किन्तु इसके लिये पौधों को चुनिंदा वनस्पति-उद्यानों में ही संरक्षित करना होगा, तथा इसका भी ध्यान रखना होगा कि, वहाँ उन्हें वही प्राकृतिक आवास मिले, जैसा कि उन्हें वनों मे: मिल रहा था। तभी उनका जीवन-चक्र पूर्ण रूप से चल सकेगा और उनकी संख्या में वृद्धि होगी। अरूणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोराम नागालैण्ड एवं त्रिपुरा के क्षेत्रों को आरक्षित घोषित करके भी पंर्णागों तथा सामबद्ध-पंर्णागों की अनेक जातियों को बचाया जा सकता है। इस कार्य के लिए सभी का सहयोग अनिवार्य है। क्योंकि जब तक हमारा समाज वनों की उपयोगिता तथा वहाँ बास करने वाले उच्च निम्न सभी प्रकार की वनस्पतियों के महत्व को नही जानेगा तथा वनों के संरक्षण के लिये जागरूक नही होगा, हम पूर्णरूप से सफल नही हो पायेगे।

## महत्व (औषधिक तथा आर्थिक) :

आदिकाल से ही अन्य पोधों की भाँति सामबद्ध-पंर्णागों का भी आर्थिक, औषधिक एवं अलंकरणीय महत्व ज्ञात है। इनका उपयोग प्राकृतिक रंगों को बनाने में भी होता है। कुछ सामबद्ध-पर्णागों को आदिवासी सलाद और दाल-भाजी के रूप में उपयोग करते हैं । ऐसे पौधों को आदिवासी लोग गाँव हाटों में बेचकर जीवन यापन हेतु धन-राशि अर्जित करते हैं।

कुछ सामबद्ध-पंर्णागो के प्रपर्ण सुन्दर व आकर्षक होने के कारण इन्हें प्राय: घरों, उद्यानों, पार्को और होटलों आदि में प्राकृतिक सजावट के लिये उपयोग किया जाता है। पूर्वोत्तर-भारत की कुछ सिलैजिनैला व इक्वीसिटम की जाँतिया अंलकरणीय उपयोग में लाई जाती है। इनके सूखे वृन्त भी सजावट के सामान के रूप में महत्वपूर्ण है।

इनका औषधि रूप में उल्लेख ''चरक संहिता'' मे मिलता है। *सिलैजिनेला ब्रायोप्टेरिस* (संजीवनी) टानिक के रूप में उपयोग में लाई जाती है। *लाइकोपोडियम* के बीजाणुओं के चूर्ण (पाउडर) त्वचा रोगों पर लगाने के बहुतायत से उपयोग में लाये जा रहे है। इनके बीजाणु अति-ज्वलनशील होने के कारण ''बेजीटेबल ब्राइम'' स्टोन के नाम से ज्वलनशील पदार्थ के रूप में व आतिशबाजी बनाने में किया जाता है। *लाइकोपोडियम एन्नोटिनम* के बीजाणुओं में डाईहाईड्रोकैफिक, फरयूलिक, तता वैनीलिक अम्ल पाये जाते है, जो रसायनिक रूप में तथा चिकित्सा में उपयोग होते हैं। *लाइकोपोडियम*

की कुछ जातियों की पत्तियों का सार, सरसों के तेल के साथ मिला कर गटिया के रोग में जोड़ों की मालिश हेतु उपयोग में आता है। युनानी चिकित्सा में भी इनका महत्व अत्यधिक है। *सिलैजिनैला विलडिनोविआई* को जावा में चावल के साथ बड़े चाव से खाते हैं।

***इक्वीसिटम*** की कुछ जातियाँ मृदा में खनिज की उपस्थिति के सूचक के रूप में वैज्ञानिकों द्वारा प्रयोग में लाई जाती है। इनके तनों में सिलिका की उपस्थिति इनका औद्योगिक महत्व बढ़ा देती है। ये जर्मनी में आयुर्वेद चिकित्सा में मूत्रवर्धक औषधि के रूप में उपयोग किये जा रहे हैं। बेनिडिक्ट (1914) ने *इक्वीसिटम* की कुछ जातियों मे सोने (अयस्क प्रति टन) की उपस्थिति 4.5 बताया है।

अतः इन निम्न अपुष्पी पौधों का महत्व किसी भी प्रकार से उच्च पुष्पी पौधों से कम नहीं है। सामबद्ध-पर्णागों का मानव जीवन से गहरा सम्बन्ध है। भविष्य में हम पर्णागोद्भिद की अनेक जातियों के लाभदायक गुणों का उपयोग करते हुए, अनेक असाध्य रोगों पर विजय प्राप्त कर सकेंगे। बस आवश्यकता है, जन चेतना और इस क्षेत्र में अधिक से अधिक शोध कार्यो की।

## सामबद्ध-पर्णागों का संक्षिप्त वर्णन
## कुल-हृयुपरजियेसी

### 1. *हृहुपरजिया सलागो* (लिन.) बर्नह.

तना 5-35/7-8 सेमी०, मोटा, मिमि० व्यास कठोर, सीधा, अनेक बार द्विशाखित विभाजन। पत्तियाँ सघन, हरी , आरोही क्रम में आठ चक्करों में व्यवस्थित, लम्बी-भालाकार, किनारे काँटेदार से दंतित, ऊपर सतह पर मध्य शिरा सुस्पष्ट, निचले पर अस्पष्ट। कुछ पत्रकलिकायें उपस्थित। बीजाणूपर्ण कायिक पत्तियों के समान, तथा अक्षीय बीजाणुधानी उपस्थिति, बीजाणु 30-40 भूरा, छिद्रित।

वितरण :—भारत (सिक्किम), शीतोष्ण तथा उत्तरी उष्णकटिबन्धीय भागों में दोनों अर्द्धगोलाद्धो के। न्युजीलैण्ड, अमेरिका, आस्ट्रलिया, मध्य ब्राजील का पर्वतीय भाग।

पारिस्थितिकी :—आर्द्र तथा छायादार स्थानों पर जहां भूमि में ह्युमस और दूसरे कार्बनिक पदार्थ प्रचुर मात्रा में हो। स्थलीय, दुर्लभ जाति।

### 2. *हृयुपरजिया साइलेनिका* (स्प्रिंग) ट्रेव.

तना 8-15 सेमी०। बेलनाकार, 4 - 6 सेमी पत्तियों सहित व्यास, कुछ सीधा, 1-3 बार द्विशाखित, लघुशाखायें। पत्तियाँ चक्करों में सघन रूप से व्यवस्थित, परिपक्व अवस्था में पीतहरित से हरी, फैली, पतली किन्तु संगठन में कठोर, जिह्वित, 6-8 x 2-3 मिमी०, शीर्ष नुकीली, दोनों ही सतहों पर मध्यशिरा सुस्पष्ट, किनारे चिकने, शीर्षस्थ भाग पर दंतित। बीजाणुपर्ण कायिक पत्तियों के समान। बीजाणुधानी अक्ष पर। बीजाणु 35-40 पीत।

वितरण : भारत (मेघालय, तमिलनाडु), जावा श्रीलंका।

पारिस्थितिको : स्थलीय, आर्द्रता तथा छायादार स्थानों पर मुख्यतया शीतोष्ण कटिबन्ध वनों में ।

3. *ह्युपरजिया हैमिल्टोनिआई* (स्प्रिंग) ट्रव.

तना 7-15 सेमी०, सीधा, मजबूत, लटका हुआ (निलम्बी), 2-4 बार द्विशाखित, मोटा, 10-25 सेमी० व्यास पत्तियों संहित। पत्तियाँ पास-पास, अल्प-पंचभुजीय दृढ़ आयताकार-रेखित 10-15 *2-4 मिमि०, कुंठित, पीत हरित, सूखने पर चमकीली। सघन, किनारे चिकने, मध्य शिरा स्पष्ट। बीजाणुपर्ण कायिक पत्ती समान। बीजाणुधानी तने के ऊपरी भाग में अपरिवर्तित पत्तियों के अक्षीय भाग में। बीजाणु 28-32 पीले, छिद्रित।

वितरण : भारत (सिक्कम, पश्चिम बंगाल, यु० पी०, बिहार, असम, मेघालय, उड़ीसा, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडू), श्रीलंका, बर्मा, इण्डो-चीन, मलाया प्रायद्वीप (आइलैण्ड)।

पारिस्थितिकी : बहुरूपी, अधिपादप तथा नमी बाले स्थानों पर मौसयुक्त वृक्षों के तने पर बहुतायत।

4. *ह्युपरजिया पेटियोलाटा* (क्लार्क) दीक्षित

तना 5-16 सेमी० 10-15 मिमी०, व्यास पत्तियों सहित, 1-2 द्विशाखित। पत्तियाँ सुदुर, 10-12 * 1.5-2 मिमी०, आरोही, भालाकार, स्पष्ट सवृन्त, पतली, किनारे समतल, कभी-कभी अल्प घुमे हुये, अक्ष अल्प-कुंठित, निचले तल पर मध्य शिरा स्पष्ट, बीजाणुपर्ण कायिक पत्तियों के समान, छोटे, रेखित से भालाकार। बीजानुधानी अपरिवर्तित पत्तियों के अक्ष में बीजाणुपर्ण के समान, तने के शीर्ष भाग में। बीजाणु 30-35 पीले, छिद्रित।

वितरण : भारत ( मेघालय ), स्थानिक।

पारिस्थितिकी : शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में, नमी तथा गीले स्थनों पर।

5. *ह्युपरजिया क्रिप्टोमेरिना* (मैक्सीम.) दीक्षित

तना 20-30 सेमी। अल्प-सीधा, कठोर 1.5-2 सेमी० पत्तियों सहित मोटा, 2-4 बार द्विशाखित। पत्तियाँ रेखित 12-15 * 0.5-1 मिमी० घनी, समानान्तर विस्तारित, शीर्ष पर थोड़ा घुमावदार, पीत-हरित, आधार पर मध्य शिरा स्पष्ट। बीजाणुपर्ण कायिक के समान, पत्रकालिकायें उपस्थित। बीजानुधानी छोटी पत्तियों के अक्ष पर। बीजाणुपर्ण 25-35 छिद्रित ।

वितरण : भारत (अरूणाचल प्रदेश) जापान।

पारिस्थितिकी : अधिपादप, नमी वाले स्थानों पर, मासयुक्त तनों, पर शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में।

6. *ह्युपरजिया कानसीलाटा* (स्प्रिंग) ट्रेव.

तना 25-75 सेमी० लम्बा, लटका, शिथिल, 3-5 मिमी०, व्यास पत्तियों सहित, कई बार द्विशाखित। पत्तियाँ हरी, बन्द, 6-8 चक्करों में, कोरछादी, अधोवर्धी सीधी, अण्डाकार-भालाकार, कोर लहरदार, कुछ या अल्प-अंतवक्र मध्यशिरा सुस्पष्ट बीजाणुधानी छोटी, अक्षीय, अण्डाकार, लंम्बाग्र चमकदार बीजाणुपर्ण, बीजाणु 30-35 छिद्रित।

वितरण : भारत (अरूणाचल), भूटान।

पारिस्थितिकी : अधिपापद, मास युक्त तनों पर शीतोष्ण-कटिबन्धित तनों में ।

7. ***ह्युपरजिया हरटेरियाना*** **(कुम.) सेन एट सेन**

तना 5-25 सेमी०, 10-15 मिमी० पत्तियों सहित मोटा, शयान आधार, सीधा 1-4 द्विशाखित। पत्तियाँ 5-10 * 1.5-2.5 मिमी०, भालाकार, हरी, आधार पर पतली, विरल, किनारे अनियमित दंतित, पारभासी, मध्यशिरा मोटा स्पष्ट, पत्रकलिकायें। बीजाणुपूर्ण छोटा अण्डाकार, निशिताग्र, किनारे लहरदार, दंतित, मध्यशिरा स्पष्ट। बीजाणुधानी अनियमित। बीजाणु 28-32 छिद्रित।

वितरण : भारत (सिक्किम, मणिपुर, पश्चिम बंगाल) चीन।

पारिस्थितिकी : अधिपादप, शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में मॉस युक्त तनों पर। दुर्लभ जाति।

8. ***ह्युपरजिया सिराटा*** **(थम्ब.) रोथम.**

तना 7-30 सेमी० मोटा, शिथिल, 1-6 मोटा पत्तियों सहित, शयान आधार, सीधा, 1-4 द्विशाखित। पत्तियाँ विरल, 5-3 × 1.5 - 3 मिमी०। 4 चक्रों में भालाकार से जिह्वित, अवृन्त या वृन्तीय, मोटे से पतले, नीचे की तरफ फैली, किनारे अनियमित दंतित, अक्ष पर नुकीला या म्यूकरोनेट, मध्य शिरा स्पष्ट। बीजाणुपर्ण कायिक पत्ती समान 12-15 छिद्रित।

वितरण : भारत ( पश्चिम बंगाल, सिक्किम, असम, अरूणाचल, मेघालय, मणिपुर, तमिलनाडू) नेपाल, वर्मा, श्रीलंका, चीन, जापान, उष्ण अमेरिका, सैंडविच व मलाया प्रायद्वीप, फिजी। बहुतायत।

पारिस्थितिकी : अधिपादप, शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में मॉसी तनों पर।

9. ***ह्युपरजिया सुबलीफोलिया*** (वाल. एक्स हूक एट ग्रिव.) ट्रेव.

तना 15-30 सेमी० लटका हुआ मोटा, ०।५-१ सेमी० व्यास पत्तियों सहित, कई बार द्विशाखित। पत्तियाँ सूच्यग्री, 10-15 × 1-1.5 मिमी०, सघन, कोरछादी, आरोही, मध्य भाग थोड़ा उठा हुआ, भूरी-हरी, कोर लहरदार, शयान आधार, निशिताग्र शीर्ष, पतली, मध्य शिरा सुस्पष्ट। बीजाणुपर्ण छोटे, अण्डाकार-भालाकार, हरे। तने के मध्य से शीर्ष तक बीजाणुधानी। बीजाणु 25-30 पीले, छिद्रित।

वितरण : भारत (पश्चिम बंगाल, सिक्किम मेघालय, उ० प्र०) नेपाल, श्रीलंका।

पारिस्थितिकी : उप-उष्णकटिबन्धित वनों में लटके हुए अवस्था में वर्षा वाले वनों में, आद्रता वाले मॉसी शाखाओं पर।

10. ***ह्युपरजिया पल्वेरिमा*** **(वाल. एक्स हूक. ऐट ग्रीव.) सेन एट सेन**

तना 15-20 सेमी० झूलता, बेलनाकार, 1-1.5 सेमी पत्तियों सहित मोटा, १-३ द्विशाखित। पत्तियाँ रेखित, 10-12 × 0.7-1 मिमी० तिर्यक-विस्तारी, अनियमित, अधोवर्धी रहित आधार पतला, किनारे लहरदार, अस्पष्ट मध्यशिरा पीत-रहित। बीजाणुपर्ण कायिक पत्ती समान। बीजाणुधानी अनियमित, बीजाणु 28-30PM पीत, रंध्रित (छिद्रित)।

वितरण : भारत (पूरा पूर्वोत्तर-भारत) नेपाल।

पारिस्थितिकी : शीतोष्ण कटिबन्धित वनों

में, नमी छायादार वृक्षों पर लटके हुये।

### 11. *ह्रयुपरजिया स्क्वारोजा* (फार्स्ट.) ट्रैव.

तना 20-110 सेमी०, कठोर, 2-3 बार द्विशाखित। पत्तियाँ गहरी-हरी से भूरी-हरी, सघन, फैली, आरोही, खाँचेदार, भालाकार, 10-15 मिमी०, आधार गोल, अतंवर्लित, चपटी, मध्यशिरा अस्पष्ट, शँकु अक्षीय, लम्बे, 2-20 सेमी० लम्बे, 1-2 बार द्विशाखित। बीजाणुर्पण, सीधे, अण्डाकार-भालाकार, 4-6 मिमी० लम्बे। बीजाणु 28-25 PM हरा-सफेद, गर्तिका युक्त।

वितरण : भारत (पश्चिम बंगाल, सिक्किम, मेघालय, असम, दक्षिण भारत), नेपाल, वर्मा, श्रीलंका, मलाया, बंगलादेश, फॉलीनीसिया।

परिस्थितिकी : उष्ण कटिबन्धित वनों में, अधिपादप, मॉसी व छायादार वृक्षों पर। बहुरूपी जाति, बहुतायत व्याप्त जाति।

### 12. *ह्रयुपरजिया दीक्षितियाना* मण्डल एट घोष.

तना 1.5 सेमी० 5 - 3 सेमी० ऊँचा, मुख्य तना 3-5 मिमी० मोटा, आधार शयान, 1-2 बार द्विशाखित, कठोर। जड़े आधार पर। पत्तियाँ घनी, आरोही, पीत-हरित, कायिक पत्तियाँ बड़ी होती, संकरी, भालाकार, 2-4 x 1-1.5 मिमी० कोर चिकने, अनियमित, निशिताग्र शीर्ष, झिल्लीदार। मध्यशिरा स्पष्ट (पत्तियों की 3/4 भाग लम्बाई तक) पत्तियाँ निशिताग्र। बीजाणुपर्ण तने की शीर्ष पर, कायिक पत्तियों के समान, छोटे, सघन, मध्यशिरा स्पष्ट, कोर अनियमित निशिताग्र। बीजाणु भूरे, चतुष्कोणीय, ट्राइलेट, वाह्य चोल खुरदुरे।

वितरण : उत्तरी सिक्किम, दक्षिण-पूर्व तिब्बत, उत्तरी वर्मा, मध्य तथा पूर्व नेपाल।

पारिस्थितिकी : पौधा छोटी घासों तथा मॉसी व छायादार वृक्षों के बीच पनपता है। खुले तथा तेज धूप वाले स्थानों पर भी उपलब्ध।

### 13. *फ्लेग्मेरीयूरस फ्लेगमेरिया* (लिन) सेन एट सेन.

तना 15-75 सेमी० झूलता, बेलनाकार, 1-3 सेमी० मोटा, पत्तियों सहित एक से दो बार द्विशाखित। पत्तियाँ कुछ पास-पास, 6-8 चक्रों में समानान्तर फैली, अण्डाकार भालाकार से भालाकार, 8-15 x 5-5 मिमी०, अल्प अवृन्तीय, गोल से हृदयाकार आधार, पतली हरी से भूरी सूखने पर मध्यशिरा स्पष्ट। शंकु शीर्षस्थ, 5-20 सेमी०, बेलनाकार, शीर्ष पर शाखित। बीजाणुपर्ण दूर-दूर, छोटे त्रिकोणीय, पतले से मोटा। बीजाणु पीला, 35-38 PM चिकना, गर्तिकायुक्त।

वितरण : भारत (सिक्किम, प० बंगाल, असम, अरूणाचल, केरल, अण्डमान-नीकोबार) आस्ट्रेलिया न्युजीलैण्ड।

पारिस्थितिकी : अधिपादप, उष्ण-कटिबन्धित वनों में मॉसी तनों पर।

14. ***फ्लेग्मेरीयूरस फाइलैन्थस*** **( हूक. ऐण्ड आर्न.) दीक्षित.**

तना 15-40 सेमी०, माँसल, मोटा, 4-5 सेमी०, व्यास में पत्तियों सहित, सीधा, झूलता, 1-2 बार द्विशाखित। पत्तियाँ अण्डाकार-भालाकार, 15-25 × 6-10 मिमी०, आरोही, पार्श्व पत्तियाँ फैली, पीत-हरित, चमकीली, माँसल, मध्यशिरा, स्पष्ट। शंकु 2-25 × 2-4 की०, अक्षीय, द्विशाखित। बीजाणुपर्ण अण्डाकार, निशिताग्र, बीजाणुधानी का अल्प भाग ढके हुये, बीजाणु 35-45 PM पीला, जालिकावत् और खुरदुरे।

वितरण : भारत (कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, अण्डमान-निकोबार), श्रीलंका, मलाया पेनिनसुला, बोरनिओ, सैंडविच प्रायद्विप।

पारिस्थितिकी : अधिपादप झूलता, उष्णकटिबन्धित वनों में माँसी तनों पर।

कुल - लाइकोपोडियेसी

15. ***लाइकोपोडियम एन्नोटिनम*** **लिन.**

मुख्य तना, चौड़ा, शखित, आरोही, रेगंता हुआ ऊपरी भाग साधारण निचला सघन संयुक्त। पत्तियाँ 4 चक्करों में पास-पास, फैली, भालाकार 3-5 × 1-2 मिमी, निशिताग्र से म्यूकरोनेट (नुकीला), किनारे लहरदार, दंतित, मोटा, नीलाभपर्णी, पीत-हरित, आरोही क्रम में नोड पर, मध्यशिरा स्पष्ट। शकुं एकल, अवृन्ती, बेलनाकार, 2-5 × 4-6 मिमी०। बीजाणुपर्ण अण्डाकार, छोटा, निशिताग्र, तृणाभ कोरछादी, अनियमित, दंतित किनारे। बीजाणु पीले, 35-40PM जालिकावत्।

वितरण : भारत (उ० प्र०, सिक्किम, मेघालय) उत्तरी धुव तथा उत्तरी शीतोष्ण कटिबन्धित भागों में दोनों अर्द्धगोलार्द्ध में।

पारिस्थितिकी : झूलता अधिपादप, नम तथा गीले स्थानों पर पाये जाने वाले मॉसी वृक्षों के तनों पर।

16. ***लाइकोपोडियम जैपीनिकम*** **थन्ब.**

तना क्ई मीटर लम्बा, लतर, सघन शाखित। पत्तिया 6 चक्रों, भालाकार-खाँचेदार, बाह्य-फैली। स्पाइक रेसीम 2-7। बीजाणुधानी सुदूर, छोटा सहपत्र रूपी शल्क। बीजाणुपर्ण अण्डाकार, कोर झिल्लीयुक्त, लहरदार, शीर्ष निशिताग्र से नुकीली, बीजाणु 34-35 PM।

वितरण : पूरे भारत में पर्वतीय भागों में, नेपाल, भूटान, वर्मा, श्रीलंका, चीन, जापान, बंगलादेश।

पारिस्थितिकी : स्थलीय, तलसर्पी पौधा, उप-उष्ण-कटिबन्धित भागों में घासों तथा छोटे घने पौधे के बीच पाया जाता है।

17. ***लाइकोपोडियम वाइचिआई*** **क्राइस्ट.**

तना लम्वा शाखित, मुसलाकार, आरोही। पत्तियाँ छोटी वृत्तीय, 2.5-4 ×1-1.5 मिमी० आरोही, त्रिकोणीय-भालाकार, सघन, किनारे लहरदार,

अंतवर्लित,मध्यशिरा निचली सतह पर, 2-2.5 सेमी० × 3-4 मिमी०। बीजाणुपर्ण पतले, सघन, कोरछादी, अण्डाकार, कर्णाकार आधार, नुकीले शीर्ष। बीज़ाणु 30-40 PM ।

वितरण : भारत (सिक्किम, अरूणाचल) चीन जापान।

पारिस्थितिकी : उष्ण-कटिबन्धित वनों में, घासों तथा सघन छोटे पौधों के साथ-साथ उठाता है।

### 18. *डाइफैसिएस्ट्रम कॅमप्लानाटम* (लिन।) होलुब

स्थलीय पौधा, मुख्य तना लतर, बारम्बार द्विशाखित, सीधा। पत्तियाँ 4 चक्करों में लगभग संलग्न, तीन समानान्तर सतहों (पृष्ट, पार्श्व व अभ्यक्ष) और द्विशाखित या त्रिशाखित, विरोधी, क्रासित, दूर-दूर द्विरूपी, 4 चूर्णावृत, पीत-हरित, पार्श्व पत्तियाँ अधोवर्धी, ऊपरी भाग संमतवर्लित नालीदार, पृष्ट व अभ्यक्ष पत्तियाँ रेखित, लग्न, पृस्ट बड़ा, अभ्यक्ष छोटा, कोरछादी, बीजाणुर्पण अण्डाकर, आरोही, एकान्तर विन्यासित। बीजाणु 30-35 PM,

वितरण : भारत (मेघालय, तमिलनाडू) उत्तरी शीतोष्ण भाग, अल्पाइन भाग।

परिस्थितिकी : उप उष्ण वनों में पाया जाने वाला स्थलीय पौधा।

### 19. *डाइफैसिएस्ट्रम एल्पाइनम* (लिन.) होलुब

तना लतर सर्पिल, शाखित, प्रारम्भिक पत्तियों से ढ़का पंखे के समान पत्तियाँ अण्डाकार-भालाकार, 2-4 × 5-8 मिमी० अधोवर्धी, मोटी, हरी सूखने पर भूरी-काली, मध्यशिरा अस्पष्ट। स्पाइक (शंकु) 1-2 सेमी० × 2-5 मिमी० बेलनाकार। बीजाणुपर्ण अण्डाकार, आरोही, निशिताग्र, कोरछादी, अनियमित लहरदार। बीजाणु 22-32 PM ।

वितरण : भारत (सिक्किम), उत्तरी ध्रुवीय तथा दोनों अर्द्धगोलार्द्ध में उत्तरी शीतोष्ण भाग में।

पारिस्थितिकी : शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में पाया जाता है।

### 20. *पालहीनिया सरनुआ* (लिन.) प्रैंक्रों एट वास्क।

स्थलीय, राइजोम भूमिगत, पार्श्वशाखायें वृक्षवत्, 4-2 मीटर लम्बा एकल, अवृन्तीय झूलता। शंकु अक्षीय। पत्तियाँ रेखित भालाकार, 3-5 मिमी० लम्बा, चमकीला हरा-भूरा। किनारे अनियमित, पक्ष्मवत् (सिलिया); आरोही। बीजाणुर्पण विर्दीण या दंतित किनारे। बीजाणुधानी अनुदीर्घवृत्ताकारी, दरार उपस्थित किनारे विदीर्ण, वाल्व अनियमित। बीजाणु 22-23 ट्रातीलेट, गर्तिल।

वितरण : भारत में पूर्वोत्तर भाग तथा सम्पूर्ण पर्वतीय भाग। विश्व के उष्ण कटिबन्धित भाग।

पारिस्थितिकी : उष्ण कटिबन्धित वनों में सूर्य की तेज किरणों के बीच चट्टानों पर उगता है।

21. ***लाइकोपोडिऐस्ट्रम कैजुऐराइनोआइडिस*** **(स्प्रिंग) होलुब ऐक्स दीक्षित.**

तना मोटा आरोही, तृणाभ से लाल, शाखित, संघन संयुक्त, 10-25 सेमी० लम्बा झूलता। पत्तियाँ परिवर्तित रुपी, अनियमित रूप से तने पर, अधोवर्धी, हरी-लाल, पर्णपाती काचाभ, रोमिल, स्वतंत्र ब्लेड 3 मी० लम्बे। शंकु 2.5-7.5 सेमी × 3-4 मिमी०। बेलनाकार। बीजाणुपर्ण अण्डाकार, आरोही, किनारे कॅटीले, निशिताग्र। बीजाणु 30-40 PM पीले, अनियमित, दानेदार।

वितरण : भारत (असम, मेघालय), भूटान वर्मा, चीन मलायाप्रायद्वीप, फिलिपिन्स प्रायद्वीप।

पारिस्थितिकी : नमी और आर्द्रता वाले स्थानों पर, वर्षा वाले जंगलों में, छायादार वृक्षों के नीचे उगता है।

कुल – सिलेजिनेलैसी

22. ***सिलेजिनेला इंण्डिका*** **(माइल्ड) ट्राइहोन.**

तना 10-25 सेमी० सर्पिल, पृष्टीय अध्यक्ष, आधारीय शाखीय, त्रिपिच्छकीय या द्विपिच्छकीय राइजोफोर तार समान, लम्बा, पूरे पौध पर। पत्तियाँ समरूपी, लम्बा, पूरे पौध पर। पत्तियाँ समरूपी, लम्बी त्रिकोणीय, नुकीली, किनारे पक्षवत् (सिलियेटेड) दंतित। शंकु 5-7 × 1-5 मिमी० एकल, अक्षीय। बीजाणुपर्ण समरूपी, त्रिकोणीय, गोलाकार से नुकीले, अक्षीय, कोर सिलियेटेड से दंतित। गुरूबीजाणु 350-370 पीले-नारंगी, खुरदुरे। लघुबीजाणु 40-45 गहरे पीले, खुरदरे तथा जालिकावत्।

वितरण : भारत (अरूणाचल, बिहार, म० प्र०, उड़िसा तमिलनाडू, उ०प्र०) नेपाल, भूटान।

पारिस्थितिकी : उप-उष्ण कटिबन्धित वनों में, शुष्क स्थानो पर पाया जाता है। मरूद्भिद् पौधा।

23. ***सिलैजिनैला प्युबीसेन्स*** **(वाल. ऐक्स हूक. एट ग्रीव.) स्प्रिंग**

तना 35-75 सेमी०, सीधा, चतुष्कोणीय, चमकीला, वयस्क अवस्था में तृणाभ, आधार सामान्य, शाखित, बाद में द्विशाखित, पिच्छिकीय संयुक्त, शुष्क वातावरण में सिकुड़ता है। तना तथा शाखायें रोमिल। पत्तियाँ मुख्य तने पर समरूपी तथा उपशाखाओं पर विषमरूपी। पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार-आयताकार खाँचेदार, नुकीली, अक्षीय, आन्तरिक 1/2 भाग भी आन्तरिक 2/2 भाग के समान, नुकीली। कक्षवर्ती पतियाँ अण्डाकार-भालाकार । मध्य पत्तियाँ छोटी, आरोही, वृत्ताकार, खाँचेदार, अंतवर्लित आधार, शीर्ष नूकीला। शंकु बेलनाकार। 5-10 × 1-2 मिमी०, एकल, अक्षीय। बीजाणुपर्ण समरूपी, कुब्जादार-अण्डाकार, नुकीला। गुरूबीजाणु 350-400, पीला-नारंगी, खुरदरा। लघुबीजाणु 25-40 PM पीत, कॅाटेदार।

वितरण : भारत (असम), बर्मा, सियाम, इण्डो-चाइना।

पारिस्थितिकी : पौधे चट्टानों के दरारों

के बीच वास करता हुआ। आतप आवासी ।

### 24. *सिलेजिनैला बाइफोरमिस* ए. बी. एक्स कुहन

तना 15-50 सेमी०, सर्पिल, आरोही, तलसर्पी पीले से भूरा, मोटा, चतुष्कोणीय, आधार सामान्य पंख के समान। राइजोफोर, लम्बे मोटे, भूमिगत (1/3); तना और उप-शाखायें रोमिल, पीली, छोटी पर्णपाती। पत्तियाँ समरूपी मुख्य तने पर, परन्तु उप-शाखाओंपर विषमरूपी। पार्श्व पत्तियाँ फली, खाँचेदार, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार, पक्ष्मवत्, दंतित, वाह्य 1/2 बाग अण्डाकार, लूनाग्र आधार। कक्षीय पत्तियाँ अण्डाकार, निशिताग्र, पक्ष्मवत्। मध्य पत्तियाँ कोरछादी अण्डाकार, फानाकार निशिताग्र शीर्ष दंतित। शंकु चतुरावलिक, 5-7 × 1-2 मिमी०, उपशाखाओं के शीर्ष पर, एकल। बीजाणुपर्ण समरूप, अण्डाकार, नुकीले, दंतित। गुरूबीजाणु 230-250 पीत-श्वेत, सूक्ष्मवलिमय। लघुबीजाणु, 10-22 PM कम पीले, कुंठित।

वितरण : भारत (आसाम, मेघालय, नागालैण्ड, मणिपुर), बर्मा, चीन, फिलिपिन्स, जावा, सुमात्रा।

पारिस्थितिकी : स्थलीय, छायाप्रिय स्थानों पर, चट्टानों के बीच उगता है।

### 25. *सिलैजिनैला बिलडिनोविआई* (डिस्व. ऐक्स पोआयर) बेक.

तना 30-150 सेमी, तलसर्पो, लहरदार, मोटा चमकीला तृणाभ, आधार शाखित, पिच्छाकार संयुक्त। राइजोफोर भमिगत। पत्तियाँ समरूपी, विषमरूपी, उपशाखाओं पर, सघन शाखित, हरी, पतली, कमजोर। पार्श्व पत्ती आरोही, लम्बी-अण्डाकार, अस्पष्ट पर्ण-वृन्तीय, हृदयाकार, अल्पनिशिताग्र, नुकीली आधार। कक्षवर्ती पत्तियाँ, पार्श्व पत्तियों के समान। मध्य पत्तियाँ छोटी, अण्डाकार, तिरछी आधारित । शंकु चतुष्कोणीय, 5-15 × 1-2.5 मिमी०, एकल, शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण एकरूपी, अण्डाकार, अच्छिन्नकोर। गुरूबीजाणु 400-500 भूरे, पैपिलामय। लघुबीजाणु 20-35 PM पीले, बीजाणुचोल, पतले, पारभासी।

वितरण : पूरा पूर्वोत्तर-भारत, बर्मा, मलाया, मलेशियन प्रायद्विप।

पारिस्थितिकी : स्थलीय, छायाप्रिय पोधे, आद्र तथा नम स्थानों पर उगता है।

### 26. *सिलैजिनैला हेल्फरी* वार्ब.

तना अरोमिल, 70-250 सेमी०, आरोही, मोटा, खाँचेदार, कठोर, तृणाभ । सघन आधार शाखित, संयुक्त पिच्छकीय, पंखें के समान। राइजोपोर लम्बा मोटा, मुख्य तने के आधे-भाग तक शाखित। पत्तियाँ विषमरूपी, दूरस्थ, अल्प, सघन। पार्श्व पत्तियाँ तिरछी समानान्तर फैली हुई, अण्डाकार, हँसियाकार। कक्षवर्ती पत्तियाँ पार्श्वपत्तियाँ के समान, मध्य पत्तियाँ आरोही, कोरछादी, अण्डाकार। शंकु चतुष्कोणीय, 7-12 × 1-2.3 मिमी० उपशाखाओं पर, शीर्षस्थ, एकल। बीजाणुपर्ण, एकरूपी अण्डाकार-भालाकार हृदयाकार, आधार, शीर्ष, नुकीला। गुरूबीजाणु 250-600 पीला, बाह्यचोल, काँटीसहित। 28-35 PM शूलमय।

वितरण : भारत (अरूणाचल, मेघालय, आसाम, नागालैण्ड, अण्डमान-निकोबार) बर्मा, इण्डो-चाइना।

पारिस्थितिकी : उप-उष्ण कटिबन्धित वनों में छायादार स्थानों पर लतर के रूप में पाया जाता है।

### 27. *सिलैजिनैला इनवाल्वैनस* (ख.) स्प्रिंग.

तना 15-45 सेमी०, आरोही तलसर्पी, सूखने पर पीला, सामान्य शाखित लेकिन ऊपर की तरफ सघन शाखित, शाखायें पँखे के समान, सूखने पर मूड़ी हुई। राइजोफर आधारीय। पतियाँ समरूपी, सघन, मुख्य तना पर, लेकिन द्विरूपी उप शाखओं पर आरोही, अण्डाकार, तिरछी आधार पर, शीर्ष पर नुकीला, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार गोरछादी, वाह्य अल्प-अण्डाकार। कक्षीय पतियाँ अण्डाकार, निशिताग्र। मध्य पतियाँ छोटी, अण्डाकार, गोल आधार। नुकीला शीर्ष, दो शिराये, दंतित। शंकु चतुष्कोणीय, 5-8 ×1-2 मिमी०, एकल शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण समरूपी, अण्डाकार, निशिताग्र, दंतित। गुरूबीजाणु, पंख समान, पतली, चौड़ी, पारभासी। लघुबीजाणु 30-35 पीला सुरदरे, पारभासी बीजाणुचोल, कुछ संलग्न बीजाणु।

वितरण : सम्पूर्ण पूर्वोत्तर भाग तथा सम्पूर्ण पर्वतीय भाग (भारत), बर्मा, श्रीलंका, इण्डो-चाइना, मलेशिया प्रायद्वीप।

पारिस्थितिकी : (मरूद्भिद्) उप उष्ण तथा शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में शुष्क स्थानों पर। आतप आवासी।

### 28. *सिलैजिनैला पैन्टागोना* स्प्रिंग

तना 30-30 सेमी०, स्थलीय, सीधा, मोटा, तृणाभ-भूरा सूखने पर, आधार पर समान्य, ऊपर सघन शाखित, दूरस्थ। राइजोफोर मोटा, लम्बा लगभग 1/2 भाग आधारीय। पत्तियाँ समरूपी मुख्य तने पर, विषमरूपी ऊपर तथा उप शाखाओं पर सघन, गहरी-हरी, आरोही, अल्प-द्विनिशिताग्र। पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार-भालाकार, तिरछी आधारीय, शीर्ष निशिताग्र। आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार-भालाकार। कक्षीय पत्तियाँ अण्डाकार, दंतित। मध्य पत्तियाँ छोटी, दीर्घवृत्ताकार नुकीला शीर्ष। शँकु चतुरावलित, 8-15 × 1-2 मिमी० एकल, पार्श्व शाखाओं पर। गुरूबीजाणु 25-30 PM नारंगी-लाल, गोल, कुंठित।

वितरण : भारत (अरूणाचल, मेघालय, आसाम), स्थानिक।

पारिस्थितिकी : उप-उष्ण कटिबन्धित वनों में नदी के किनारे तथा छाया व नम स्थानों पर।

### 29. *सिलैजिनैला सेमीकारडाटा* (वाल. एक्स हूक. एट ग्रीव.) स्प्रिंग,

तना 35-150 सेमी०, सर्पिल, बेलनाकार, तलसर्पी सूखने पर स्ट्रा रंग, शाखित, पिच्छकीय, पंखरूपी, दूरस्थ। राइजोफोर मोटा, लम्बा, पूरे पौधे पर सिवाये शीर्ष का 1/3 भाग छोड़कर पत्तियाँ विषमरूपी, पतली, पीत-हरित, दंतित शीर्ष। पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार-भालाकार। फली, आधार तिरछा, नुकीली, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार-भालाकार

कक्षीय पत्तियाँ अण्डाकार भालाकार। मध्य पत्तियाँ, कोरछादी, आरोही अण्डाकार, तिरछा आधार, शीर्ष पर नुकली। शंकु चतुरावलिक 10-15 ×1-1.2 मिमी०, एकल, शीर्षस्थ।बीजाणुपर्ण समरूपी, अण्डाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणु 350-450 गहरे-भूरे वाह्य छोल। लघुबीजाणु 35-45 PM पीत, वाहय चोल सफेद, पारभासी, पँखरूपी, बीजाणुचोल, हुक के समान रचना।

वितरण : भारत (सिक्किम, अरूणाचल, आसाम, त्रिपुरा, बिहार) बर्मा, बंगलादेश मलाया, प्रायद्वीप।

पारिस्थितिकी : उप-उष्ण कटिवन्धित वनों में, छायादार व नम स्थानों में लतर के रूप में उगते हैं।

### 30. *सिलैजिनैला प्रीटरमीसा* आल्सटोन,

तना सर्पिल 50 सेमी०, से लम्बा, खाँचेदार, तृणाभ, संयुक्त सघन शाखित, पार्श्व शाखायें पिच्छकीय, राइजोफोर लम्बा, हरी-पीली, आधार से 1/3, पत्तियाँ विषमरूपी, सघन, पीत-हरित, पार्श्व पत्तियाँ फैली, अण्डाकार, दीर्घ 2-3.5 ×1.5-2 मिमी०, आन्तरिक 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार, शीर्ष भाग नुकीला, पक्ष्मवत् वाह्य 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार-आयताकार, लूनाग्र-वर्तुल आधारनुकीला शीर्ष। कक्षीय पत्तियाँ अण्डाकार-आयताकार। मध्य पत्तियाँ कक्षवर्ती, दंतित, म्युकरोट। शंकु एकल, शीर्षस्थ, चतुष्कोणीय, 4-5 × 1.5-2 मिमी०। बीजाणुपर्ण समरूपी, अण्डाकार-भालाकार, नुकीले। गुरूबीजाणु 200-500 गहरे घूरे। लघुवीजाणु 30-35 PM पीले, दानेदार।

वितरण : भारत (अरूणाचल), श्रीलंका।

पारिस्थितिकी : उष्ण कटिबन्धित वन क्षेत्रों में आर्द्रता व नम स्थानों पर लतर व सर्पिल लता के रूप में उगता है।

### 31. *सिलैजिनैला नेपालियन्सिस* स्प्रिंग

तना 30-35 सेमी०, शयान, शिथिल, चतुष्कोणीय, खाँचेदार, तृणाभ, आधारीय पिच्छकीय, तिर्यक-विस्तारी, लम्बे-पिरामिडीय शाखित। पत्तियाँ विषमरूपी, दृढ़। पार्श्व-पत्तियाँ, अण्डाकार, सीधी, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार, दंतित-खाँचेदार, वाह्य 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार। कक्षीय पत्तियाँ + पार्श्व पत्तियों जैसी। मध्य पत्तियाँ अण्डाकार, नुकीली, खाँचेदेर, दंतित, शंकु चतुष्कोणीय, 5-10 × 1-2 मिमी०, एकल, शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण समरूपी, अण्डाकार, नुकीलें दंतित। गुरूबीजाणु १८०-२२५ खुरदुरे। लघुबीजाणु 20-25 अक्षीय भाग चिकना, शेष खुरदुरा।

वितरण : भारत (अरूणांचल), मणिपुर, कश्मीर) नेपाल।

पारिस्थितिकी : चट्टानों की दरारों के बीच वास करते हुये। प्रायः नम तथा आर्द्रता वाले स्थानों में तथा घन पेड़ों की छाया में, नदी के किनारे।

### 32. *सिलैजिनैला माइटिनिआई* बेक

तना तलसर्पी, 4-9 सेमी०, सघन, तिर्यक-विस्तारी शाखित। राइजोफोर लम्बा, तार समान, शाखित, तने तथा उपशाखाओं पर, सिवाये शीर्ष भाग के। पत्तियाँ विषमरूपी, अल्प, हरी, मोटी,कठोर। पार्श्व पत्तियाँ सघन, हृदयाकार-अण्डाकार, असमान, नुकीली कोर लघुपक्षमाभी, दंतित मध्य पत्तियाँ अण्डाकार, हृदयाकार नुकीली, किनारे सिलियेटेड (पक्ष्मवत), दंतित। शँकु 3-4 × 1.5-2 मिमी० एकल, शीर्षस्थ, चतुष्कोणीय। बीजाणुपर्ण समरूपी, पास-पास, अण्डाकार-भालाकार, हृदयाकार, कोर दंतित। गुरूबीजाणु 150-275 पीत, ट्राइलेट। लघुबीजाणु छिपे हुये।

वितरण : भारत (मेघालय), अफ्रीका।

पारिस्थितिकी : मरूद्भिद् शुष्क स्थानों पर, शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में उगता है।

### 33. *सिलैजिनैला ब्रायोप्टेरिस* (लिन.) बाक.

तना 5-25 सेमी० लम्बा। सीधा, घनी शाखायें, पँखे के समान। राइजोफोर आधारीय। पत्तियाँ मुख्य शाखाओं में समरूपी, अण्डाकार-भालाकार, दंतित, लम्बाग्र शीर्ष, उपशाखाओं पर विषमरूपी, पास-पास, आरोही। पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार, तिरछा आधार, निशिताग्र शीर्ष। मध्य-शिरा छोटा, आन्तरिक 1/2 भाग पतला, श्वत-पारभासी, कोरछादी दंतित। जबकि वाह्यग्र 1/2 भाग मोटा, हरा। कक्षीय पत्तियाँ + पार्श्व पत्तियों के समान, मध्य पत्तियाँ छोटी, अण्डाकार तिरछा आधार, शीर्ष निशिताग्र, दंतित। शकुँ दुर्लभ ही पाये जाते है। बीजाणुपर्ण एकरूपी, अण्डाकार, लम्बाग्र, दंतित। गुरूबीजाणु 200-270 पीले, दानेदार। लघुबीजाणु 16-26 μM पीले, दानेदार।

वितरण : भारत (मध्य भारत, यू० पी०, पूर्वोत्तर भारत, बिहार, उड़ीसा, दक्षिण भारत)।

पारिस्थितिकी : मरूद्भिद् पौधा, शुष्क व तेज धूप वाले स्थानों पर चट्टानों के बीच, उष्ण कटिबन्धित वनों में, आतप आवासी।

### 34. *सिलैजिनैला वाजीनाटा* स्प्रिंग

तना 3-10 सेमी०, बेलनाकार, चतुष्कोणीय, सघन शाखित, आरोही। राइजोफोर, तने पर फैले, छोटे-छोटे। पत्तियाँ विषमरूपी, सघन, पतली, कठोर, पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार-भालाकार, फैली तिरछी हृदयाकार आधार पर, नुकीली, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार-भालाकार, कोरछादी, पक्ष्मवत् बाकी दंतित, वाह्य 1/2 भाग भी, आन्तरिक 1/2 भाग के समान, दंतित। मध्य पत्तियाँ कोरछादी, अण्डाकार-भालाकार दंतित, अल्प-हृदयाकार, नुकीली, दंतित। शँकु, एकल, शीर्षस्थ 3-5 × 1-2 मिमी०। बीजाणुपर्ण समरूपी या द्विरूपी, दंतित। गुरूबीजाणुपर्ण, पुर्नपिच्छिकारी, आयाताकर-समचर्तुभुजीय, नुकीले। लघु बीजाणुपर्ण अण्डाकार, आयाताकार'-समचर्तुभुजीय, नुकीले। लघु बीजाणुर्पण अण्डाकार, नुकीले। गुरूबीजाणु 240-270 गहरे-भूरे, खुरदुरे, वाह्यचोल रोमिल। लघुबीजाणु 30-40 μM गहरे नारंगी-लाल, खुरदूरे।

वितरण : (भारत के सभी पूर्वोत्तर भाग, केरल, तमिलनाडू, उड़िसा), बर्मा, भूटान।

पारिस्थितिकी : स्थलीय तथा प्राय : स्वुले तथा तेज धूप वाले स्थानों में चट्टानों के बीच। आतप आवासी।

### 35. *सिलैजिनैला रेपान्डा* (डिख. ऐक्स पोआर.) स्प्रिंग

तना 5-25 सेमी०, सीधा, पीत-भूरा, तिर्यक-विस्तारी शाखित, संयुक्त पिच्छकीय। राइजोफोर आधारीय। पत्तियाँ विषमरूपी, घनी, भूरी, पार्श्व-पत्तियाँ फैली, अण्डाकार, खाँचेदार, हृदयाकार, पक्ष्मवत्, नुकीला, दंतित आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार, वाह्य 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार। कक्षीय पत्तियाँ पार्श्व-पत्तियों जैसी, मध्य पत्तियाँ अण्डाकार कोरछादी, हृदयाकार, पक्ष्मवत् आधार पर, शेष दंतित। शीर्ष पर निशिताग्र। शँकु चतुष्कोणीय 5-8 ×1-2.5 मिमी०, अण्डाकार, एकल, शीर्षस्थ। गुरूबीजाणु 200-275 पीला-भूरा, अनियमित कोर। लघुबीजाणु 40-45 μM नारंगी-लाल, अनियमित कोर खुरदुरे। बीजाणुर्पण समरूपी, अण्डाकार, नुकीला शीर्ष।

वितरण : पूरे पूर्वोत्तर भारत के पहाड़ी भाग तथा लगभग सारे भारत के मैदानी तथा पहाड़ी क्षेत्रों में, नेपाल, बर्मा, चीन, जावा, सुमात्रा, अन्नाम, कम्बोडिया, सियाम।

पारिस्थितिकी : छायादार स्थानों पर चट्टानों की दरारों के बीच वास करता हुआ।

### 36. *सिलैजिनेला डैलीकुटुला* (डेस्व. ऐक्स पोआर) आलस्टोन

तना 15-70 सेमी०, सीधा, मोटा, माँसल, खाँचेदार, हरा-तृणाभ-सूखने पर, शाखित, घनी। राइजोफोर कई, लम्बा, जड़ समान आधार से 1/3 भाग तक, पत्तियाँ विषमरूपी, पीत-हरित, झल्लीयुक्त, मुख्य तने पर दूरस्थ, शाखाओं पर पास-पास पार्श्व पत्तियाँ आरोही, आयताकार, तिरछी आधार पर, नुकीली, शीर्ष पर दंतित, आन्तरिक 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार, आयताकार-भालाकार। कक्षीय पत्तियाँ + पार्श्व पत्तियों के समान मध्य पत्तियाँ आरोही, दीर्घवृत्ताकारी, तिरछी आधारीय, सघन शीर्ष पर। शँकु 15-30 × 1-2 मिमी० एकल, शीर्षस्थ पार्श्व शाखाओं पर। बीजाणुपर्ण समरूपी, अण्डाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणु, 350-375 पीत, खुरदुरे। लघुबीजाणु 20-30 μM पीत दारेदार, कुठित, लाल।

वितरण : भारत (सिक्किम, आसाम, त्रिपुरा, दक्षिणी भारत, गोवा, अण्डामान-निकोबार), चीन, बोरनियो, मोल्युकास, अन्नाम, टोनकीन, कोचीन-चीन।

पारिस्थितिकी : नदियों-झरनों के किनारे आर्द्रता, नमी व गीले स्थानों पर

### 37. *सिलैजिनैला इनइक्वफोलिया (हूकरी. ऐट गीव) स्प्रिंग।*

तना 50-200 सेमी०, लम्बा, मोटा, खाँचेदार, पीत, दूरस्थ शाखित, आयताकार-भालाकार, संयुक्त। राइजोफोर मोटा, लम्बा, आधारीय 1/3 भाग तक। पत्तियाँ घनी, पास-पास, चमकीली हरी। पार्श्व-पत्तियाँ, लम्बी फैली, अण्डाकार-भालाकार, खाँचेदार, शीर्ष पर निशिताग्र, पतली, आन्तरिक

1/2 भाग अण्डाकार-भालाकार, वाह्य 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार-भालाकार, गोल, नुकीला। कक्षीय पत्तियाँ मुख्य शाखा पर फैली, भालाकार। मध्य पत्तियाँ छोटी, अण्डाकार-भालाकार, रोमिल-म्युकोरेट। शँकु चतुरावलिक, 15-25 × 1.5-2 मिमी०, एकल, शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण समरूपी, अण्डाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणुधानी से स्फटित होकर गुरूबीजाणु बिखर जाते हैं। लघुबीजाणु 25-35μM पीले, पैपिलामय।

वितरण : भारत (आसाम, केरल), बर्मा।

पारिस्थितिकी : छायादार नम स्थानों पर लतर समान वास करता हुआ।

### 38. *सिलैजिनैला पिक्टा ए. बर्र. ऐक्स बेक.*

तना सीधा, टेढ़ा-मेढ़ा, मोटा, हरा, शीर्ष पर काला 30-70 सेमी०, दूरस्थ शाखित, द्विपिच्छकीय, आरोही, आयताकार-भालाकार। राइजोफोर लम्बा मोटा, पीत-भूरा, आधार से 1/3 भाग तक पत्तियाँ हरी, चमकीली, विषमरूपी, चिकनी, मुख्य तने पर दूर-दूर तथा उपशाखाओं में सघन, पतली, पार्श्व पत्तियों की वृन्त अस्पष्ट, आयताकार, निशिताग्र, दीर्घ, 1-2 × 0.5-1 मिमी० तने पर अकोरछादी, आन्तरिक १/२ भाग संकरा, गोल आधार, वाह्य 1/2 भाग बड़ा, आधार गोल, कक्षीय पत्तियाँ छोटी। शंकु 8-15 मिमी०, शीर्षस्थ, एकल, चतुरावलिक। बीजाणुर्पण समरूपी अण्डाकार, नुकीला, गुरूबीजाणुपर्ण 250-450 पीत, खुरदुरा, लघुबीजाणु 18-35μM बाह्यचोल छोटा, लाल, दानेदार।

वितरण : पूर्वोत्तर भारत, बर्मा, लाओस, इण्डो-चाइना।

पारिस्थितिकी : नम, छायादार स्थानों पर।

### 39. *सिलैजिनैला पालीडिसिमा* स्प्रिंग.

तना चिकना, 25-40 सेमी०, शयान, पीत-भूरा, पिच्छकीय। राइजोफोर, लम्बा, मोटा, आधार से 1/3 भाग तक। पत्तियाँ विषमरूपी, हरी, झिल्लीयुक्त मुख्य तनों पर दूर-दूर, उपशाखाओं पर पास-पास। पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार, तिरछी, हृदयाकार, नुकीली दंतित, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार, कोरछादी, वाह्य 1/2 अल्प-अण्डाकार। कक्षीय पत्तियाँ + पार्श्व पत्तियों के समान, मध्य पत्तियाँ, अण्डाकार, हृदयाकार, नुकीली, दंतित। शँकु एकल से जोड़े में शीर्षस्थ, 6-10 × 1-2 मिमी०। बीजाणुपर्ण विषमरूपी, दंतित। गुरूबीजाणुपर्ण अण्डाकार तिरछे, अल्प-हृदयाकार, निशिताग्र। छोटे बीजाणुपर्ण तिर्यक-विस्तारी, अण्डाकार, हृदयाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणु 350-425μM पीले, खुरदुरे। लघुबीजाणु अनुपस्थिति।

वितरण : भारत (यु० पी०, हिमाचल प्रदेश, अरूणांचल, जम्मू) स्थानिक।

पारिस्थितिकी : खुले तेज धूप वाले तथा नदी के किनारे वाले स्थानों पर मुख्यतः उप-उष्ण कटिबन्धित वनों में । आतप आवासी।

### 40. *सिलैजिनैला पिनाटा* (डी.डॉन) स्प्रिंग.

तना चिकना, 25-35 सेमी०, सीधा, कठोर, पील तृणाभ, शाखित, आरोही। राइजोफोर लम्बे, मोटे, लगभग आधे तने तक उपस्थित। पत्तियाँ

विषमरूपी, पीत-हरित, झिल्लीयुक्त। पार्श्व-पत्तियाँ दीर्घवृत्ताकारी लम्बा, पक्ष्मवत् आधार, दंतित, आधार गोल, वाह्य 1/2 भाग अल्प अण्डाकार-भालाकार, अल्प-हृदयाकार; शीर्ष भाग दंतित। मध्य पत्तियाँ पार्श्व पत्तियों के समान, रोमिल। शंकु 5-10×15-25 मिमी०, एकल, शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण द्विरूपी, झिल्लीयुक्त, दीर्घ या गुरू बिजाणुपर्ण फैले,अण्डाकार, नुकीले, दंतित। गुरूबीजाणु 350-450 पीले भूरे। लघुबीजाणु 25-35μM पीत, छोटे तथा खुरदुरे।

वितरण : भारत (पूर्वोत्तर भारत, बर्मा, सियामा)।

पारिस्थितिकी : उप उष्ण कटिबन्धित वनों में, छायादार तथा नम स्थानों पर।

### 41. *सिलैजिनैला बाइसल्काटा* स्प्रिंग.

तना 20-50 सेमी०, शयान, शिथिल, खाँचेदार, शाखित, ऊपर की तरफ घनी शाखायें। राइजोफार पूरे तने पर 1/3 शीर्ष भाग शेष; मोटा, लम्बा, पीला। पत्तियाँ विषमरूपी, मुख्य तने पर धनी, उपशाखाओं पर दूर-दूर, झिल्लीदार, निशिताग्र। पार्श्व पत्तियाँ चतुष्कोणीय अण्डाकार-आयताकार, आन्तरिक 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार, गोल, दंतित पक्षमत्, वाह्य 1/2 भाग घूमा हूआ; शीर्ष भाग शेष। मध्य पत्तियाँ चौड़ी, अण्डाकार-आयताकार, तिरछी, खाँचेदार, रोमिल, दंतित-पक्षमवत्। शंकु 4-10 × 2.5-5 मिमी०, एकल, शीर्षस्थ (पार्श्व-शाखाओं पर)। बीजाणूपर्ण द्विरूपी। गुरूबीजाणुपर्ण अण्डाकार आयताकार, दंतित-पक्षमत्, निशिताग्र। लघु बीजाणुपर्ण पार्श्व-पत्तियों के समान दंतित-पक्ष्मवत्। गुरू-बीजाणु 350-475 गहरे पीले भूरे, चिकने। लघु बीजाणु 25-32 μM पीत खुरदरे।

वितरण : भारत (पूर्वोत्तर), बर्मा, चीन।

पारिस्थितिकी : शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में, छाया व नम स्थानों पर।

### 42. *सिलैजिनैला रेटिकुलाटा* (हूक एण्ड ग्रीव।) स्प्रिंग.

तना 7-15 सेमी०, आरोही, तृणाभ सूखने पर, शाखित, तिर्यक-विस्तारी। राइजोफोर तार समान, आधार से 1/3 भाग तक। पत्तियाँ विषमरूपी, हरा, आरोही। पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार, खाँचेदार, आन्तरिक 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार, गोल आधार + शीर्ष भाग दंतित, बाह्य 1/2 भाग संकरा। मध्य पत्तियाँ छोटी, अण्डाकार, तिरछी, निशिताग्र। शंकु 4-6 × 1-2 मिमी०, एकल, पार्श्व शाखाओं पर शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण द्विरूपी, पक्षमवत्, गुरूबीजाणुपर्ण अण्डाकार-आयताकार, तिरछी, आन्तरिक 1/2 भाग + संकरा, चिकना वाह्य 1/2 भाग निशिताग्रत, रोमिल, पक्षमवत् शेष चिकना। लघुबीजाणुचपर्ण अण्डाकार, निशिताग्र, पक्षमवत्। गुरूबीजाणु 140-250 गहरा भूरा, दानेदार। लघुबीजाणु 30-45μM पीला, चिकना तथा कुछ खुरदुरा।

वितरण : भारत (अरूणांचल मेघालय), बर्मा।

पारिस्थितिकी : उप-शीतोष्ण कटिबन्धित वन क्षेत्रों में; चट्टानों पर अधिक पानी तथा नमी वाले स्थानों पर, शैलोद्भिद्।

### 43. *सिलैजिनैला क्राइसोराइजोस स्प्रिंग*

तना चिकना, 8-12 सेमी०, अल्प-सीधा, चमकीला-पीला, खाँचेदार, सघन पिच्छकीय, शाखित, फैली। राइजोफोर, पतले, तार समान, आधार पर। पत्तियाँ विषमरूपी दूर-दूर, कोर सफेद, झिल्लीदार, हल्की चमकीली हरी। पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार, हल्की चमकीली हरी। पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार-आयताकार कोरछादी, गोल आधार, दंतित, आन्तरिक 1/2 भाग अल्प-आयताकार-अण्डाकार, वाह्य 1/2 भाग अल्प-आयताकार शेष शीर्ष भाग अदंतित। कक्षीय पत्तियाँ अण्डाकार-आयताकार, दंतित। मध्य पत्तियाँ छोटी, अण्डाकार, छोटी, सघन। शँकु 3-6 × 1.5 - 2 मिमी०, एकल, पार्श्व शाखाओं पर शीर्षष्थ। बीजाणुपर्ण द्विरूपी, पक्ष्मवत्, गुरू बीजाणुपर्ण पक्षमवत्-दंतित, आयताकार, लम्बी। लघु बीजाणुपर्ण अण्डाकार, रोमिल, पक्षमवत्। गुरूबीजाणु 180-200 गहरे-भूरे, दानेदार। लघुबीजाणु 20-35μM पीत, खुरदुरे।

वितरण : भारत (आसाम, पं० बंगाल)।

पारिस्थितिकी : उष्णकटिबन्धित वनों में नम स्थलों पर चट्टानों के बीच उगते हैं।

### 44. *सिलैजिनैला कुरजीआई* बेक.

तना 3-4 सेमी० लम्बा सीधा, भूरा-लाल, कठोर संघन, पिच्छकीय तिर्यक-विस्तारी, संयुक्त शाखित। उपशाखाओं की निचली सतह की पत्तियाँ समीपस्थ तिर्यक-विस्तारी, अण्डाकार-भालाकार, पीत-रहित, झिल्लीदार, पक्षमवत्, तने के ऊपरी भाग में कोरछादी, लम्बी, अण्डाकार, दीर्घ, निशिताग्र। शँकु सघन, छोटे, 1.1 मिमी०, सहपत्र द्विरूपी, ऊपरी तल अण्डाकार भालाकार, तिर्यक-विस्तारी, निचला तल अण्डाकार, निशिताग्र आरोही।

वितरण : भारत (आसाम), नेपाल, सियाम, मलाया, फिलिपिन्स।

पारिस्थितिकी : नदी, झरनों के किनारे, नमी वाले स्थानों पर।

### 45. *सिलैजिनैला सिलियेरिस* (रेटज.) स्प्रिंग

तना 2-8 सेमी०, धराशयान, सीधा, संयुक्त शाखित, तिर्यक-विस्तारी। राइजोफोर पतले, आधार से 1/4 भाग तक। पत्तियाँ विषमरूपी, चमकीली हरी, झिल्लीयुक्त, पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार-आयताकार, तिरछी, हृदयाकार, निशिताग्र, आन्तरिक 1/2 भाग अल्प अण्डाकार-आयताकार, कोरछादी पक्षमवत्; वाह्य 1/2 समान। पक्षीय पत्तियाँ, हृदयाकार, अल्पखाँचेदार, अल्प-निशिताग्र, दंतित। शंकु सघन, 8-15 × 2-4 मिमी०; एकल या जोड़े में शीर्षस्थ। बीजाणुर्पण द्विरूपी, झिल्लीयुक्त, पक्ष्मवत्। गुरू बीजाणुपर्ण अण्डाकार-आयताकार, फैले, आन्तरिक 1/2 भाग दंतित, वाह्य 1/2 भाग निशिताग्र। लघु बीजाणुपर्ण आरोही, अण्डाकार, हृदयाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणु 180-225 पीत। लघुबीजाणु पीत-भूरे, खुरदुरे 30-35μM ।

वितरण : पूरा भारत, बर्मा, श्रीलंका, चीन, फिलिपिन्स प्रायद्वीप।

पारिस्थितिकी : शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में, तेज धूप खुले चट्टानों के बीच।

### 46. *सिलैजिनैला माइन्युटीफोलिया* स्प्रिंग.

तना धराशयान, 1-3 सेमी० छोटा, आधार शाखित, तिर्यक-विस्तारी, राइजोफोर पतले, आधारीय। पत्तियाँ विषमरूपी, दूरस्थ। पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार-आयताकार, फली, आधार पर समान, शीर्ष पर निशिताग्र कोर लघुपक्षमाभी-दंतित। मध्य पत्तियाँ अतंवर्लित, अण्डाकार-आयताकार, निशिताग्र दंतित। कक्षीय पत्तियाँ + पार्श्व पत्तियों जैसी। शँकु शीर्षस्थ, एकल, 5-7 × 2-2.5 मिमी०. बीजाणुपर्ण विषमरूपी, पक्षमवत्। गुरू बीजाणुपर्ण बन्धय, अण्डाकार-आयताकार, निशिताग्र, पक्षमवत्-दंतिता लघुबीजाणुपर्ण अबन्धय, नुकीले, गुरूबीजाणु 150-250μM पैपिलामय। लघुबीजाणु पीले, पैपिलामय।

वितरण : भारत (आसाम); बर्मा, मलाया।

पारिस्थितिकी : छायादार घनें वनों में नम स्थलों पर उगता है।

### 47. *सिलैजिनैला वाटिआई बेक*

तना बेलनाकार, 3-8 सेमी०, दूरस्थ शाखित । राइजोफोर तने समान, आधार पर। पत्तियाँ विषमरूपी, झल्लीदार, पीत-हरित। पार्श्व पत्तियाँ अण्डाकार, कोरछादी, हृदयाकार-गोल आधार, आन्तरिक 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार, पक्षमवत् आधार वाह्य 1/2 भाग आन्तरिक 1/2 भाग के समान। कक्षीय पत्तियां + पार्श्व पत्तियों के समान। मध्य पत्तियाँ छोटी, अण्डाकार, रोमिल, पक्षमवत्, शीर्ष नुकीला। शंकु 3-5 × 1-1.5 मिमी०, एकल, शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण द्विरूपी, झिल्लीदार। गुरूबीजाणुपर्ण, आयताकार, पक्षमवत् आधार। लघुबीजाणुपर्ण अण्डाकार, रोमिल, पंखवत्। गुरूबीजाणु 200-300 गहरा नारंगी-लाल, दानेदार, महीन, सफेद, पारभासी वाह्य चोल। लघुबीजाणु 25 & 28μM गहरा भूरा दानेदार।

वितरण : भारत (मणिपुर), बर्मा।

पारिस्थितिकी : उप उष्ण कटिबन्धित वनों में, चट्टानों की दरारों के बीच नम स्थलों पर।

### 48. *सिलैजिनैला डेसिपिन्स वार्ब.*

तना 40-70 सेमी०, सीधा, आधारीय जड़, दूरस्थ शाखित, शाखायें द्विपिच्छकीय, अण्डाकार-भालाकार। पत्तियां विषमरूपी आरोही, दूर-दूर व्यवस्थित (मुख्य तने पर), उपशाखाओं पर सघन। पार्श्व-पत्तियाँ अण्डाकार, कोरछादी, खांचेदार, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार, कोरछादी, खाँचेदार, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार, नुकीली, वाह्य 1/2 भाग आयताकार। मध्य पत्तियां छोटी, अण्डाकार, तिरछी, नुकीली, लम्बाग्र रोमिल। शंकु 3-5 × 1-1.5 मिमी० एकल, शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण द्विरूपी, दंतित। दीर्घ-बीजाणुपर्ण अण्डाकार-आयताकार, नुकीले। लघुबीजाणुपर्ण अण्डाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणु 250-350 गहरे भूरे, पैपिलामय। लघुबीजाणु 22-25μM पीले, दानेदार।

वितरण : पूर्वोत्तर-भारत, मलाया, इण्डो-चाइना, टोनकिन।

पारिस्थितिकी : उप उष्ण कटिबन्धित वनों में, चट्टानों की दरारों के बीच आर्द्रता वाले स्थानों पर।

### 49. *सिलैजिनैला मेगाफाइला* बेक

तना 40-75 सेमी०, मोटा, आधार अंतवर्लित, आधार शाखित, संयुक्त शाखित, द्विशाखित विभाजन। राइजोफोर, लम्बा, मोटा, तने के मध्य तक। पत्तियां विषमरूपी, आधार पर दूर-दूर तथा उपशाखाओं में व ऊपर सघन, फैली, आधार पर तिरछी, शीर्ष पर नुकीली, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार-भालाकार, गोल और कोरछादी, वाह्य 1/2 भाग रेखीय-आयताकार। कक्षीय पत्तियां + पार्श्व पत्तियों के समान। मध्य पत्तियाँ अण्डाकार-भालाकार, आयताकार, नुकीली, दंतित। शंकु 10-15 × 1- 2.5 मिमी० एकल, शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण द्विरूपी, दंतित। गुरूबीजाणुपर्ण अण्डाकार-आयताकार, नुकीला। लघुबीजाणुपर्ण छोटा, अण्डाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणु 350-375 पीला, खुरदूरे। 20-25μM पीले, दानेदार।

वितरण : भारत ( अरूणाचल, आसाम) भूटान, बर्मा।

पारिस्थितिकी : उष्ण कटिबन्धित वनों में व छायादार वृक्षों के नीचे, नमीदार स्थलों पर।

### 50. *सिलैजिनैला मोनोस्पोरा स्प्रिंग*

तना 30-90 सेमी० शयान, कठोर, भूरा चमकीला, संयुक्त, आधार से शाखित, शाखित पिच्छकीय संयुक्त, दूर-दूर, फैली। राइजोफोर लम्बा, मोटा, तने के मध्य तक। पत्तियां विषमरूपी, पीत-हरित, सघन, मोटी। पार्श्व-पत्तियाँ अण्डाकार भालाकार, तिरछी, आधार वृत्ताकार, नुकीला शीर्ष, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार-भालाकार, कोरछादी, दंतित। कक्षीय पत्तियां + पार्श्व पत्तियों के समान। मध्य पत्तियां अण्डाकार या गोल, आरोही, आधार हृदयाकार, रोमिल, दंतित। शंकु चतुष्कोणीय 5-10 × 1-2.5 मिमी०, एकल, शाखाओं के शीर्ष पर। बीजाणुपर्ण सम या द्विरूपी; गुरूबीजाणुपर्ण अण्डाकार-चतुष्कोणीय, नुकीला। लघुबीजाणु अण्डाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणु 200-350 भूरा, दानेदार। लघुबीजाणु 25-30μM नारंगी-लाल पैपिलामय।

वितरण : पूर्वोत्तर भारत, केरल, तमिलनाडु (दक्षिण भारत), बर्मा, चीन, इण्डो-चीन।

पारिस्थितिकी : उप उष्ण तथा शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में खुले तथा छायादार स्थानों पर, चट्टानों की दरारों में।

### 51. *सिलैजिनैला हूकरी बेक।*

तना 30-50 सेमी०, मोटा, आधार से 1/3 भाग तक। पत्तियां समरूपी (मुख्य तने पर), दूर-दूर उपशाखाओं पर पास-पास, चमकीली हरी ऊपरी सतह पर तथा निचली सतह पर, पतली। पार्श्व-पत्तियां अण्डाकार से आयताकार-भालाकार। फैली, आरोही, निशिताग्र, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार भालाकार, आधार गोल, वाह्य 1/2 आयताकार-भालाकार। कक्षीय पत्तियां मुख्य तने को ढके हुये नुकीली, अण्डाकार मध्य पत्तियां, आयताकार, कोरछादी, आरोही, नुकीली। शंकु 4-6 × 1-2 मिमी० चतुष्कोणीय, एकल, पार्श्व शाखाओं पर शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण एकरूपी, अण्डाकार, हृदयाकार आधार,

नुकीला शीर्ष। गुरूबीजाणु 225-260 भूरा, दानेदार। लघुबीजाणु 22-28μM नारंगी-लाल, खुरदुरा।

वितरण : पूर्वोत्तर भारत, बर्मा, मलाया प्रायद्वीप, इण्डो-चीन, अन्नाम।

पारिस्थितिकी : उप उष्ण कटिबन्धित वनों में, चट्टानों के बीच छायादार नम तथा खुली धूप में भी वास करते हैं। आतप आवासी।

## 52. *सिलैजिनैला वालीचिआई (हूक ऐट ग्रीन.) स्प्रिंग.*

तना 60-90 सेमी० शयान, लम्बा, सीधा, मोटा, तृणाभ (सुखने पर), द्विशाखित विभाजन, शाखायें पिच्छकीय, अल्प पिरामिडीय, दूरस्थ। राइजोफोर लम्बा, मोटा, दूरे तने पर। पत्तियां समरूपी (मुख्य तने पर) उपशाखाओं पर विषमरूपी, घनी, चमकीली हरी, पार्श्व पत्तियां आयताकार-भालाकार, फैली, खांचेदार, आधार असमान, निशिताग्र, आन्तरिक 1/2 अण्डाकार-भालाकार, गोल आधार, वाह्य 1/2 आयताकार-भालाकार, नुकीली। कक्षीय पत्तियां अण्डाकार, नुकीली, ना तो ज्यादा बड़ी और ना ही पूरे तने को ढकी हुई। मध्य पत्तियाँ अण्डाकार-आयताकार, कोरछादी, आरोही, द्विकर्णाकार, नुकीली। शंकु 5-12 × 1-2 मिमी०. चतुष्कोणीय, एकल, शीर्षस्थ। बीजाणुपर्ण एकरूपी, अण्डाकार निशिताग्र। गुरूबीजाणु 350-375 पीले, अनियमित, खुरदुरे। लघुबीजाणु 30-35μM पीले, वाह्य बीजाणुचोल छोटा तथा दानेदार।

वितरण : पूर्वोत्तर भारत, बर्मा, मलाया, कोलम्बिया, लाओस, टोनकिन।

पारिस्थितिकी : उप-उष्ण कटिबन्धित वनों में खुले तथा नम स्थानों पर वास करते है।

## 53. *सिलैजिनैला आरनाटा* (हूक ऐट ग्रीव.) स्प्रिंग।

तना 15-25 सेमी, सीधा, मोटा, तृणाभ आधार शाखित, शाखायें संयुक्त। राइजोफोर लम्बा, मोटा, पूरे तने पर, शीर्ष 1/3 भाग शेष पत्तियाँ विषमरूपी, सघन। पार्श्व-पत्तियां फैली, अण्डाकार, आधार पर तिरछी, निशिताग्र शीर्ष, आन्तरिक 1/2 भाग अण्डाकार, पक्ष्मवत आधार, शेष दंतित, वाह्य 1/2 भाग अल्प-आयताकार दंतित। कक्षीय पत्तियां अण्डाकार, हृदयाकार, पक्षावत् आधार, दंतित, नुकीला शीर्ष। मध्य पत्तियां आरोही,अण्डाकार, हृदयाकार निशिताग्र आधार, खाँचेदार, दंतित। शंकु 5-7×1-2 मिमी० एकल, शाखाओं के शीर्ष पर। बीजाणुपर्ण द्विरूपी, दंतित। गुरूबीजाणुर्पण, अण्डाकार, खांचेदार। लघुबीजाणुपर्ण अण्डाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणु 300-350μM पैपिलामय। लघुबीजाणु 32-35 μM नारंगी-लाल, खुरदरे।

वितरण : भारत (अरूणाचल, मेघालय), मलाया प्रायद्वीप।

पारिस्थितिकी : उप-उष्ण कटिबन्धित वनों में छायादार स्थानों पर अधिक नमी तथा आर्द्रता वाले स्थानों पर।

## 54. *सिलैजिनैला क्राइसोकाउलोस* (हूक ऐट ग्रीव।) स्प्रिंग

तना 10-30 सेमी०, सघन, कठोर, बेलनाकार,

भूस्तारी आधार, सीधा, पीत-भूरा, आधार से 1/4 भाग तक। पत्तियाँ विषमरूपी, चमकीली हरी, तने पर दूर-दूर, उपशाखाओं पर पास-पास, आरोही, पार्श्व-पत्तियां, अण्डाकार, फैली (90°), तिरछी, अल्प-हृदयाकार, निशिताग्र, दंतित, गुरूबीजाणुपर्ण आायताकार, तिरछी, नुकीला। लघुबीजाणुपर्ण अण्डाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणु 200-350μM गहरा-भूरा, दानेदार। लघुबीजाणु 50-55μM गहरा नारंगी, खुरदुरे।

वितरण : पूर्वोत्तर भारत, केरल (भारत), नेपाल, भूटान।

पारिस्थितिकी : उष्ण कटिबन्धित वनों में चट्टानों की दरारों के बीच उत्पन्न होता है।

### 55. *सिलैजिनैला सबडियाफाना* (वाल एक्स हूक. एट ग्रीव), स्प्रिंग.

तना चिकना, 133 सेमी० लम्बा, भूस्तारी, आधार शाखित, दूर-दूर, द्विपिच्छकीय। राइजोफार लम्बा, पीत-हरित, आधार से 1/4 तक, चिकना-हरा, झिल्लीदार, मुख्य तने पर दूर-दूर, पास-पास उपशाखाओं पर, आरोही। पार्श्व-पत्तियां अण्डाकार 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार, + पक्ष्मवत-दंतित आधार, शीर्ष पर भी दंतित, वाह्य 1/2 भाग अल्प आयताकार-भालाकार। कक्षीय पत्तियां अण्डाकार, हृदयाकार, आधार पक्ष्मवत, दंतित। मध्य पत्तियां अण्डाकार, आधार गोल, निशिताग्र। शंकु 4-6 × 2-3 मिमी०, एकल, पार्श्व शाखाओं पर शीर्षस्थ,निशिताग्र। बीजाणुपर्ण द्विरूपी दंतित। गुरूबीजाणुपर्ण अण्डाकार, निशिताग्र। लघुबीजाणुपर्ण अण्डाकार, निशिताग्र। गुरूबीजाणु 200-250μM लाल-भूरे, खुरदुरे। लघुबीजाणु 30-35μM लाल-भूरे, दानेदार।

वितरण : भारत (हिमाचल प्रदेश, पंजाब, उ० प्र०, मेघालय, नागालैण्ड), नेपाल।

पारिस्थितिकी : उप-उष्ण व् शीतोष्ण कटिबन्धित वनों में नमी वाली जगहों पर चट्टानों की दरारों के बीच।

### 56. *सिलैजिनैला टेन्युआइफोलिया* स्प्रिंग

तना 12-20 सेमी०, सीधा, चतुष्कोणीय तृणाभ, आधार शाखित, संयुक्त, तिर्यक-विस्तारी। पत्तियां विषमरूपी, आरोही, अल्प सघन। पार्श्व पत्तियां अण्डाकार, तिरछी, हृदयाकार, निशिताग्र, पीत-रहित, आन्तरिक 1/2 भाग अल्प-अण्डाकार, कोरछादी, दंतित, वाह्य 1/2 भाग अल्प अण्डाकार-आयताकार। कक्षीय पत्तियां + पार्श्व-पत्तियों के समान। मध्य पत्तियां अण्डाकार, तिरछी, रोमिल, लम्बाग्र। शंकु 5-8 × 1-2 मिमी० एकल, शीर्षस्थ (पार्श्व शाखाओं पर)। बीजाणुपर्ण द्विरूपी दंतित। गुरू बीजाणुपर्ण अण्डाकार-आयताकार, चमकीला-हरा, फैली। लघुबीजाणुपर्ण अण्डाकार, रोमिल। गुरूबीजाणु 200-300μM भूरा, दानेदार। लघुबीजाणु 25-30μM पीला-भूरा, अनियमित दानेदार।

वितरण : भारत (अरूणाचल, मेघालय, सिक्किम, दार्जिलिंग),बर्मा, लाओस, सियाम।

पारिस्थितिकी : उप-उष्ण कटिबन्धित वनों में उगने वाला पौधा तथा नदी के किनारों पर भी पाया जाता है।

कुल – इक्वीसीटेसी

### 57. *इक्वीसिटम डिप्यूसम* लिन.

पौधा छोटा, तना 30-50 सेमी०, लम्बा, सीधा, पतला, बन्ध और अबन्धय,उपशाखाओं 5-6 तक, नोड तथा इंटरनोड, नोड एक चक्रमें, इंटरनोड 3-4 सेमी० कठोर, रेखीय-पंचकोणीय, 6-12 वर्ग, नालीदार, संकरा शिरा। शंकु वृन्तीय, 1-2 सेमी० लम्बा, अण्डाकार, बेलनाकार।

वितरण : सिक्किम, हिमाचल प्रदेश, शिमला से तिब्बत तक, आसाम, मेघालय, नेपाल, भूटान, बर्मा, चीन।

पारिस्थितिकी : नम तथा आर्द्रता वाले स्थानों में प्रायः उत्पन्न होते हैं।

कुल – साइलोटेसी

### 58. *साइलोटस नूडम* डी. डान

पौधा 15-35 सेमी०, जड़विहीन, वायुवीय शाखायें, सीधी, झूलती हुई, बेलनाकार, द्विशाखित विभाजन, उपशाखायें त्रितली शाखा समान, पत्तियां महीन, पतली, शल्कीय, सघन। बीजाणुधानी बहुत छोटी, वृन्त पर, तने के अग्र भाग पर समबीजाणुपर्ण, द्विशाखित। समबीजाणु, वायुवीय तनों के शीर्ष पर।

वितरण : अधिपादप, शैलोद्भिद, झूलते हुये (लटके हुये) स्थिति में प्रायः नदी के किनारे, व आर्द्रता वाले स्थानों पर पाये जाते हैं।

संदर्भ


बेकर, जे० जी०, 1887, *हैण्ड बुक आफ फर्न*–एलाइस लंदन।

आल्सटॉन, ऐ० ऐच० जी०, 1945, एन इन्युमरेशन आफ दि इन्डियन स्पीसीज आफ *सिलैजिनैला, प्रोसी. नेट. इन्सटी. सांइ. इण्डिया,* 11 : 211-235।

पाणिग्रही, जी० एंड दीक्षित, आर० डी० 1966, स्टडीज इन दि सिस्टेमेटिक्स ऑफ दि इण्डियन *सिलैजिनैला* – **111**, *प्रोसी. नेट ऐकाडेमी आफ साइं* 36(1) : 102-108।

1967, स्टडीज इन दि सिस्टेमेटिक्स ऑफ दि इण्डियन *सिलैजिनैला* – **11** *जर्नल इण्डियन बोटे० सो०* 46 (2 और 3) : 222-233

1968, स्टडीज इन दि सिस्टेमेटिक्स ऑफ दि इण्डियन *सिलैजिनैला* – 1, *प्रोसी. नेट. इन्सटी. सांइ. इण्डिया,* 34 (4) : 191-209।

दीक्षित, आर० डी०, 1977, *लाइकोपोडियेसी आफ इण्डिया,* (बिशनसिंह एवं महेन्द्र पाल सिंह प्रकाशक देहरादून।)

1992, *सिलैजिनेलेसी ऑफ इण्डिया,* (बिशन सिंह एवं महेन्द्र पाल सिंह प्रकाशक देहरादून।)

वशिष्ठा, पी० सी० 1995, *बाटनी फार डिग्री स्टूडेन्टस टेरिडोफाइटा,* (ऐस० चाँद ऐण्ड कम्पनी लिमिटेड नई दिल्ली।)

# पूर्वोत्तर भारत में ऑर्डर – डिक्सोनिऐल्स के वृक्षीय पर्णांग – एक विवेचना

*रामदास दीक्षित एवं विनीत कुमार रावत*

*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मध्य क्षेत्र, इलाहाबाद-211002*

प्रस्तावना :– हिमालय की उन्नत पर्वत श्रंखलाऐं, विस्मय पैदा करने वाले विविध प्राकृतिक दृश्यों की छटा बिखरती वानस्पतिक समृद्धता, कुहासे से ढके पर्वत, उफनती नदियाँ, कलकल बहती जलधाराऐं और घने जंगल–यही सब उत्तर पूर्वी राज्यों की विशेषता है जो जनसामान्य के अन्तः करण में अनूठे आनन्द को उत्पन्न करती है और प्रकृति के साथ हमारे गहरे और स्फूर्तिदायक सामंजस्य की परिचायक है।

इन्ही विशेषताओं के कारण पूर्वोत्तर-भारत को 'वानस्पतिक स्वर्ग' की संज्ञा दी गई है तथा यहाँ के पेड़-पौधों पर वानस्पतिज्ञ व प्रकृतिविद् सतत कार्य कर रहे है। पूर्वोत्तर भारत जिसका क्षेत्रफल अनुमानतः 255050 वर्ग किमी० है एवं सात राज्यों के संगठन से निर्मित है जिसमें अरूणांचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैण्ड व त्रिपुरा सम्मिलित है।

यहाँ वर्ष भर अत्यधिक वर्षा होने के कारण जलवायु आर्द्रता से परिपुरित रहती है। अधिकांश भागों में 2000 मिली० से अधिक वर्षा होती है। यहाँ 5500 मी० तक की उचाँई वाली पर्वत श्रृंखलाए पाई जाती हैं।

इसलिए यह भाग उष्ण-नम वनों का स्वाभाविक स्थल व उदगम क्षेत्र अपने आँचल में जैवविविधता की समृद्धता को समाहित किए हुये हैं। विश्व भर में अपनी आकर्षित करने वाली प्राकृतिक सुन्दरता के लिए प्रसिद्ध यह पूर्वोत्तर क्षेत्र अनेक एवं अन्य प्रकार की वनस्पतियों का खजाना होने के कारण हॉटस्पाट के नाम से भी जाना जाता है।

प्रस्तुत लेख में आर्डर-डिक्सोनिएल्स फर्न जो पूर्वोत्तर भारत में मुख्यतः पाए जाते हैं, उनकी विवेचना प्रस्तुत है।

पीची० सरमोली (1977) के वर्गीकरण के आधार पर भारत में गण डिक्सोनिऐल्स के अन्तर्गत दो सबआर्डर (उपगण) डिक्सोनी व साइथिनी एवं इन उपगणों के अन्तर्गत एक-एक कुल (Family) डिक्सोनिऐसी व साइथिऐसी सम्मिलित है। डिक्सोनिएसी के अन्तर्गत एक प्रजाति सिबोटियम ( 2 जातियाँ) व साइथिऐसी के अन्तर्गत दो प्रजातियों एल्सोफाइला (9 जातियाँ) व स्फेरियोप्टेरिस (6 जातियाँ) आते हैं।

## तालिका (1) :– पूर्वोत्तर में वृक्षीय पर्णांग–एक दृष्टि में

| कम संख्या | जातियाँ | वितरण |
|---|---|---|
| 1 | एल्सोफाइला एन्डरसोनाई | भारत (सिक्किम, दार्जीलिंग, मेघालय, असम, अरूणाचल प्रदेश) भूटान, चीन |
| 2 | एल्सीफाइला गोमिआई | भारत (सिक्किम) स्थानिक |
| 3 | एल्सीफाइला कोस्टयूलेरिस | भारत (सिक्किम) स्थानिक |
| 4 | एल्सीफाइला जाइगोन्शिया | भारत (सिक्किम, मेघालय, दार्जीलिंग, अरूणाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश)बंगलादेश, वर्मा, नेपाल, थाईलैण्ड, वियतनाम |
| 5 | एल्सीफाइला खासियाना | भारत (सिक्किम, दार्जीलिंग, मेघालय, असाम) वर्मा, |
| 6 | स्फेरोप्टोरिस ब्रूनोनियाना | भारत (पूर्वोत्तर भारत उ० प्र० हिमालयन क्षेत्र) चीन टोंकिन |
| 7 | स्फेरोप्टीरिस होल्टूमियाना | नगालैण्ड, स्थानिक |
| 8 | सिबोटियम असामिकम | असम क्षेत्र, टोनकिन |
| 9 | सिबोटियम वॉरोमेट्रज | उ०पूर्वी भारत, वर्मा, मलायाद्वीप, चीन आस्ट्रेलिया, मलेशिया |

**तालिका कमांक (2) :– वृक्षीय पर्णांग जातियों का वितरण**

| विषय | जातियॉ | वितरण क्षेत्र |
|---|---|---|
| स्थानिक जातियॉ | 1-स्फेरियोप्टेरिस होल्टूमियाना | नागालैण्ड क्षेत्र |
| | 2-एल्सीफाइला गोमियाई | सिक्किम |
| | 3-एल्सोफाइला कोस्ट्रयूलेरिस | सिक्किम |
| विरल जातियॉ | 1-एल्सोफाइला खासियाना | मेघालय |
| | 2-सिवोटियन असामिकम | असम |
| संकट ग्रस्त जातियॉ | 1-ए. खासियाना | मेघालय (खासी पहाड़ियॉ) |
| उत्तर पूर्व राज्यों में व्यापक वितरित जातियॉ | 1-एल्सोफाइला एन्डरसोनाई | भारत (सम्पूर्ण उत्तर पूर्व क्षेत्र) एवं |
| | 2-एल्सोफाइला जाइगेन्शिया | प० बंगाल, साथ ही बंग्लादेश, वर्मा, |
| | 3-एल्सोफाइला ब्रूनोनियाना | नेपाल, थाईलैण्ड, वियतनाम |
| | 4-एल्सोफाइला बोरोमेट्रज | |

प्रत्येक पर्णांग जाति की अकारिकी, संक्षिप्त वर्णन वितरण, पारिस्थितिकी सहित प्रस्तुत लेख में विवेचना की गयी है अतः वैज्ञानिकों को इस क्षेत्र के अन्तर्गत कार्य करने में सुगमता होगी।

1. *एल्सोफाइला एन्डरसोनाई* : स्कॉट एक्स बेड.

यह वृक्षीय पर्णांग 1.5-5.0 मी० लम्बा, द्विपिच्छकी प्रपर्ण, पर्णक व वृन्त युक्त होता है, इसमें पर्णपाती स्केल्स नुकीले शीर्ष व पीले रोमिल उपान्त युक्त होते हैं। इसकी परिपक्व पिच्छिकाएं 12.0-15.0×2.5-3.2 सेमी. के आकार की होती है। शिरायें 10-12 की संख्या में कभी कभी 14 जोड़ी विरलित, साधारण, द्विविभाजित व इसकी शिरिकाएं (Costules) 5-6 मिमी. दूरस्थ होती है। इसमें स्तरिका खण्डित व शाकीय प्रवृति की पतली चक्रित होती है। साथ ही बीजाणु फलिका इन्डूशियम रहित व लघुशिरिका के किनारे स्थित होती है।

वितरण : भारत (सिक्किम, दार्जीलिंग, मेघालय, आसाम, अरूणाचल प्रदेश) भूटान, चीन।

पारिस्थितिकी : वह वृक्षीय पर्णाग उत्तर पूर्व राज्यों में प्रायः नदी के किनारे नम छायादार स्थानों पर पाया जाता है।

2. *ऐल्सीफाइला गेमिआई* दीक्षित

इसके वृन्त चमकीले, कणिकामय, गहरे भूरे रंग के होते हैं। इसमें पिच्छिका (pinnules) अण्डाकार, 10.0-13.3 × 2.05-2.8 सेमी० आकार की, शिरा 9-10 जोड़ी, साधारण या शाखित होती है। सीराई इन्डूशियम रहित होती है जिसमें लघुशिरिका आधारिय भाग से दूरस्थ होती है व निचला खण्ड हमेशा छोटा व स्वतंत्र रहता है।

वितरण : भारत –सिक्किम, स्थानिक

पारिस्थितिकी : यह जाति नदी की जलधाराओंके किनारे नम व छायादार स्थानों पर मुख्य रूप से पाई जाती है।

3. *एल्सीफाइला कास्टयूलोरिस* बेकर

यह वृक्षीय पर्णांग 2-2.5 मी० लम्बा, प्रकन्द मोटा, सीधा व सघन होता है। इसके स्केल 2.2-5.0 × 1.0-1.5 मिमी० गहरे भूरे रंग के होते हैं। पिच्छक 50-75×10-20 सेमी०, होती है। लघुशिरिका (कोस्टयूल) आपस में 3-4.5 मिमी० की दूरी पर स्थित, शिरा 7-10 जोड़ी प्रायः द्विभाजित होती है। सोराई इन्डूशियम युक्त जो Costules के आधारिय भाग में स्थित होती है।

वितरण : भारत–सिक्किम, स्थानिक

पारिस्थितिकी : नदी के किनारे नम स्थानों पर

4. *एल्सीफाइला जाइगोंशिया* वाल. एक्स हुक.

यह वृक्षीय पर्णाग 2-3 मी० लम्बा, प्रकन्द मोटा, सीधा खड़ा एवं प्रपर्ण सघन व संयुक्त होते हैं। इसका वृन्त एक मीटर से ज्यादा लम्बा, मध्य भाग गहरे भूरे रंग की आभा लिए साथ ही इसके उपान्तीय सिरे चमकीले पीले रंग के जो सीटी में विभक्त रहते है। इसकी पिच्छिका लघु वृन्तीय 8.0-12.5×1.5-2.5 सेमी० क्रमश सिरे की तरफ संकीर्ण होती है। लघु शिरिका 4-7 मिमी० दूर शिरा 5-6 जोड़ी होती है।

सोराई इन्डूशियम रहित, इसके पिच्छक वृन्त युक्त, गहरे बैगनी रंग के, चिकने, रोमिल, साथ ही कुछ सूक्ष्म अवशेषी लघु प्रायः स्केल धारण किये रहते हैं।

वितरण : भारत (सिक्किम, मेघालय, दार्जीलिंग, अरूणाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश) बंग्लादेश, बर्मा, नेपाल, थाईलैण्ड, वियतनाम।

पारिस्थितिकी : जल धाराओं के समीप, विरल स्वभाव वाला वृक्षीय पर्णाग है।

5. *एल्सोफाइला खासियाना* मूरे एक्स कुहन

यह वृक्षीय पर्णाग 2-3 मी० लम्बा एवं इसके वृन्त गहरे भूरे रंग के प्राय 40 सेमी से ज्यादा लम्बे, गहरे बैगनी-नीला रंग लिए, काँटे युक्त आधारीय भाग स्केल युक्त, कभी-कभी सपूर्ण वृन्त पर (Scales) 10-15×1-2 मिमी०, पिच्छक + 75 सेमी लम्बे होते हैं। पिच्छिका +75 सेमी लम्बी 2.0-12.0 × 1.5-3.0 सेमी० सोराई इन्डूसियम रहित होती है।

वितरण : भारत (सिक्किम, दार्जीलिंग, आसाम, मेघालय) बर्मा

पारिस्थितिकी : नम, छायादार स्थानों व जलधाराओं के समीप, विरल जाति है।

खासी पहाड़ियॉ : पिन्नूरस्लाह, 1000 मी० उचॉई पर

6. *स्फेरोप्टेरिस ब्रूनोनियाना* वाल. एक्स हुक.

वृन्त पर स्केल दृश्य नहीं, पिच्छक व पर्णवृन्त भूरे रंग के, पिच्छक 70 सेमी० से ज्यादा लम्बे, पिच्छिका 8-15×2-2.5 सेमी० शिरा 10-13 जोड़ी, द्विभाजित, सोराई इन्डूशियम रहित जो लघु शिरिका को ढके सम्पूर्ण निचली सतह को घेरे रहती है। कभी कभी सूक्ष्म स्केल उपान्तीय रोम से आवरित शिरा व लघुशिरिका पर देखे गये है।

वितरण : भारत (उ०पू० हिमालय क्षेत्र, पूर्वोत्तर भारत) चीन, टोंकिन

पारिस्थितिकी : खुले जंगलों में जलधाराओं के समीप नम स्थानों पर

7. *स्फेरोप्टेरिस होल्दुमियाना* (राव व जमीर) दीक्षित

इसका तना मोटा, 2 से 3 मी० लम्बा, सीधा, खड़ा लघुशिरिका पीली भूरी, रोमिल, प्रपर्ण 60×25 सेमी० से अधिक, लम्बाकार या अण्डाकार, पिच्छाकार, तृतियक पिच्छक या पिच्छिका अधिक संख्या मे, अर्द्धविपरीत, एकक, शिरा 6-15 जोड़ी, सोराई इन्डूशियम रहित होती है, इसके बीजाणु पीले भूरे रंग के होते हैं।

वितरण : नागालैण्ड में स्थानिक

पारिस्थितिकी : वनो में व नम पहाड़ी क्षेत्रों में, विरल स्वभाव

8. *सिवोटियम असामिकम* हूक.

वृक्षवत पर्णांग, लम्बा स्तम्भ (Caudex) मजबूत सीधा खड़ा, 1.5 से 2 मी० लम्बा, कठोर पर्ण धारण किये हुए, रोम से सघनरूप ढका हुआ, प्रपर्ण बड़े, त्रिपिच्छिक स्वतंत्र शिराओं सहित, सोराई शिरे पर स्थित (सीमान्त स्थिति), कप जैसे इन्डूसियम से संरक्षित (दो उभयोन्तल सिरों से निर्मित) वीजाणुधानी कमशः विकसित, सुस्पष्ट वलय से युक्त, इन्डूशियम, तिर्यक, वीजाणु चतुर्दीघी।

वितरण : भारत (आसाम); टानकिन

पारिस्थितिकी : घने जंगलो में, स्थलीय आवास

9. *सिबोटियम वोरोमेट्रज* (लिन.) जे. स्मिथ

यह भी वृक्षीय पर्णाग है जो लम्बे तने युक्त, मजबूत सीधा, खड़ा व प्रपर्ण 2.5 मीटर लम्बे, त्रिपिच्छिक, अरोमिल एवं इनके अपाक्ष व अग्यक्ष सतह पर सफेद पाउडर जैसा पदार्थ लगा रहता है, इसकी स्टाइप 1 मी० से ज्यादा लम्बी होती है। आधार पर संकीर्णित स्केल, गोलाकार वीजाणुधानी गुच्छ, बड़ा इन्डूशियम आपाती, प्रायः एक दूसरे को स्पर्श करने वाले होते हैं। इसके इन्डूशियम से स्पष्ट 2 कपाट, वाह्य कपाट चर्मिल होता है, साथ ही स्तरिका पार्श्व में खुलती है।

वितरण : उ० पूर्वी भारत, बर्मा, मलाया द्वीप, चीन, आस्ट्रेलिया।

पारिस्थितिकी : स्थलीय आवास, जंगलो में नम स्थानों पर।

**विरल व संकट ग्रस्त जातियों का संरक्षण : एक पूर्वानुमान**

औद्योगिक विकास, शहरीकरण, बॉध व नहर निर्माण, खनन आदि के कारण पौधों की कुछ जातियॉ विरल हो गयी हैं और कुछ संकट ग्रस्त है। इस परिप्रेक्ष्य में उत्तर पूर्व के पर्णागं भी अछूते नही रह गये है। उत्तर पूर्व में स्थानिक वृक्षवत पर्णांग की 3 जातियॉ, विरल जातियों की श्रेणी में दो (2) संकट ग्रस्त जातियों की श्रेणी में एक (1) एवं उत्तर पूर्व राज्यों में व्यापक वितरित जातियों में चार (4) जातियाँ सम्मिलित हैं।

उत्तर पूर्व में शायद ही कोई ऐसा क्षेत्र होगा जहाँ वानस्पतिक विविधता परिलक्षित न होती हो इसी प्रकार वृक्षीय पर्णागं की विविधता भी इस क्षेत्र मे अपने सुंदर एवं दीर्घ फ्रांड (Frond) के कारण आश्चर्यचकित व सम्मोहित करती है। (पूर्वोत्तर भारत में सर्वाधिक संख्या में पर्णागं जातियॉ पाई जाती हैं,केवल पूर्वोत्तर क्षेत्रमें ही पर्णांग की अनुमानित संख्या 524 है जिसमें फर्न-एलाइस 59 एवं फर्न 475 हैं।

समूचा उत्तर पूर्व पर्णांग के लिए उपयुक्त स्थल के रूप मे देखा जाता है। वृक्षीय पर्णांग अपने सुन्दर एवं आर्किड के पौधों के संवर्धन के लिए उपयुक्त आधारीय माध्यम होने के कारण वनो से निरन्तर काटे जाने से विरल एवं विलुप्त होने के कगार पर है जो कि एक विचारणीय प्रश्न होने के साथ साथ गंभीर समस्या है। पूर्व में वन्य जीवों के लिए भी कानून बने है वे सभी प्राणी सम्बन्धी हैं। जिन स्थानों पर इनका घनत्व ज्यादा है वहॉ राष्ट्रीय उद्यान और वन्य जीव अभ्यारणों के अपेक्षित परिणाम नही मिले हैं। इसलिए जीवमण्डल आरक्षित क्षेत्र घोषित कर इनको स्वस्थाने संरक्षित किया जाना परमावश्यक है क्योंकि अन्य पादप समूहों की भॉति वृक्षसम पर्णांग विशिष्ट प्राकृतिक आवासों में प्राप्त होने के कारण इनका संरक्षण जैव मण्डल संरक्षित क्षेत्रों में ही करना उचित होगा।

संरक्षण के उपाय : सर्वप्रथम पौधों के ऐसे प्राकृतिक आवास संरक्षित करना अत्यंत आवश्यक है, जहॉ पर्याप्त प्रतिनिधिक सापेक्ष वनों के नमूने प्राकृतिक संरक्षण पा सकें।

एक ओर तो नये वंश व जातियॉ खोजी जा रही है ओर दूसरी ओर पहले से ज्ञात वंश व जातियॉ विरल, संकट ग्रस्त एवं लुप्त होती जा रही हैं।

जहॉ तक संभव हो सके जातियों को उनके प्राकृतिक आवासों में ही संरक्षित किया जाना चाहिए। ज्ञात संकटग्रस्त एवं लुप्तप्रायः जातियों को वनस्पति उद्यानों में संरक्षण प्रदान करना चाहिए। इन प्रयासों से ही वनस्पति का अधिकाधिक संरक्षण संभव है।

## संदर्भ

**पी. वी. सरमोली, आर. इ. जी., 1977 टेन्टामेन टेरिडोफाइटोरम जेनरा इन टेक्सोनॉमिकम आर्डिनेम रेडीगेन्डी वेबिया 31(2) & 313-512.**

---

# नव ग्रह से सम्बन्धित पौधे – एक अवलोकन

*रामदास दीक्षित एवं उमा शंकर वैश्य*
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मध्य क्षेत्र, इलाहाबाद*

जीवन का सम्पूर्ण सुख-दुःख, हानि-लाभ, जय-पराजय आदि विषय नवग्रहों की चाल पर आधारित है । प्रस्तुत लेख में ग्रहों के पौराणिक परिचय, धारण करने के लिए रत्न एवं पूजन-हवन हेतु आने वाले पौधों पर विश्लेषणात्मक संक्षिप्त विवरण दिया गया है ।

अनादिंकाल से हमारे ऋषि–मुनियों ने प्रत्येक ग्रह से सम्बन्धित पौधों के बारे में जानकारी एकत्र कर नवग्रह वाटिकायें इस दृष्टि से स्थापित की थी कि ग्रहों के कुप्रभावों को वृक्ष एवं वनस्पतियाँ कम कर देती है ।

भारतीय मनीषियों ने सूर्यमण्डल के समस्त सदस्यों व उप–सदस्यों जिसमें सूर्य एवं चन्द्रमा भी शामिल हैं को ग्रह कहा है। धरती के करीब होने से इनकी स्थिति रोज बदलती रहती है। कुल नौ ग्रहों की पहचान की गयी है । ग्रहों के शान्ति हेतु पूजा–पाठ, यज्ञ हवन में विशेष प्रजाति के पल्लव, पुष्प–फल, एवं काष्ठ की आवश्यकता पड़ती है , जो नवग्रह से सम्बन्धित पौधे ही दे सकते हैं। पुराणों के अनुसार जिस ग्रह का प्रकोप हो उससे सम्बन्धित पौधों को यत्नपूर्वक संरक्षण एवं पूजन से ग्रह की शान्ति होती है तथा जातक को मनोवांछित फल मिलता है।

### 1. सूर्य–

इस ग्रह का एक नाम सविता भी है जिसका अर्थ है सृष्टि करने वाला । यह कमल के आसन पर विराजमान हैं। भगवान सूर्य का वर्ण लाल है। इनका वाहन रथ है। भगवान सूर्य सिंह राशि के स्वामी हैं। इनकी महादशा छः वर्ष की होती है, इनकी शान्ति के लिए माणिक्य रत्न धारण करना चाहिए और पूजन के लिए मदार के पुष्प, फल एवं लकड़ी उपयुक्त मानी जाती है।

मदार का लैटिन नाम–कैलोट्रापिस जिगेन्सिया आर० बी० आर० (कुल- एस्कलीपेडियेसी)

अन्य नाम–अर्क, मदार, आदित्य, भास्कर दिवाकर । यह 1 से 2 मीटर ऊँचा पौधा होता है। फूल बैगनी तथा सफेद रंग के होते हैं। फल-फोलिकिल्स तथा बीज असंख्य होते है। यह भारतवर्ष के शुष्क भागों में पाया जाता है।

### 2. चन्द्रमा–

चन्द्रदेव का वर्ण गौर है और सोलह कलाओं से युक्त हैं। रथ पर सवार है। कर्क राशि के स्वामी है। इनकी धारण महा दशा 10 वर्षो की होती है तथा शान्ति के लिए मोती धारण करना चाहिए । हवन

पूजन के लिए पलाश के पुष्प, फल, एवं काष्ट का उपयोग किया जाता है।

पलाश का लैटिन नाम ब्यूटिया मोनोस्पर्मा ओ. कुन्टज (कुल पैपिलियोनेसी)

अन्य नाम ढाक, ब्रम्ह वृक्ष, ब्रम्ह पादप

यह 8 से 10 मीटर ऊँचा पेड़ होता है । पत्तियाँ तीन पत्रों में पायी जाती है। फूल चटक नारंगी रंग के होते है। फल सेम की फली की तरह होता है। यह भारत वर्ष के शुष्क भागों में पाया जाता है।

### 3. मंगल–

मंगल देवता की चार भुजायें हैं। इनके शरीर के रोयें लाल है। यह मेष (भेड़ा) के वाहन पर सवार है। इनकी महादशा सात वर्षो की है। शान्ति के लिए प्रवाल रत्न धारण करना चाहिए । हवन पूजा के लिए खैर की लकड़ो का विधान है।

खैर का लेटिन नाम एकेसिया कैटचू विल्ड० (कुल-माइमोसेसी)

अन्य नाम–खैर, कत्था, कैटचू

यह 9 से 12 मीटर ऊँचा पेड़ होता है फूल छोटे हलके पीले रंग के होते हैं। फल छोटी चपटी फली की तरह होते है। यह भारत के शुष्क जंगलों में पाया जाता है।

### 4. बुध–

बुध देवता पीले रंग की पुष्प माला एवं पीत वस्त्र धारण करते हैं। इनके शरीर की कान्ति पीले कनेर के पुष्प जैसी है। इनका वाहन सिंह है। यह मिथुन राशि के स्वामी है इनकी महादशा सत्रह वर्ष की होती है। शान्ति के लिए रत्नों में पन्ना धारण करना चाहिए। हवन पूजन में अपामार्ग के पुष्प, फल एवं लकड़ो का प्रयोग किया जाता है।

अपामार्ग का लेटिन नाम एक्झरेन्थस एस्परा लिन (कुल-एमरेन्थसी)

अन्य नाम–अपंग, अपामार्ग, चिचड़ा, लटजीरा, चमत्कार

यह 30 से.मी. ऊँचा होता है। यह जंगली पौधा है । यह कंकरीली तथा बेकार पड़ी जमीन मैं पाया जाता है । फ्ल छोटे बालीदार हरे सफेद रंग के होते हैं । यह भारत वर्ष में सूखे भागों में पाया जाता हैं ।

### 5. बृहस्पति–

देव गुरू बृहस्पति पीत वर्ण में हैं। यह कमल आसन पर विराजमान हैं। यह धनु और मीन राशि के स्वामी है। इनकी महादशा 16 वर्ष की है। रत्नों में पीला पुरवराज धारण करना चाहिए। एवं हवन पूजन के लिए पीपल के काष्ठ का प्रयोग किया जाता है।

पीपल का लेटिन नाम– फाइकस रेलीजियोसा लिन० (कुल-मोरेसी)

यह एक 10-20 मीटर ऊँचा विशाल वृक्ष होता है फल रेसेप्टीकिल्स के रूप में छोटे तथा जोड़ में होते हैं। पकने पर बैगनी रंग के हो जाते है। यह भारत के मैदानी भागों में पाया जाता है।

### 6. शुक्र –

दैत्यों के गुरू शुक्र का वर्ण श्वेत है और श्वेत कमल के आसन पर विराजमान हैं। यह शुक्र बृष एवं

तुला राशि के स्वामी है। इनकी महादशा 20 वर्ष की होती है। शान्ति के लिए हीरा धारण करना चाहिए एवं हवन पूजन के लिए गूलर की लकड़ो का प्रयोग किया जाता है।

गुलर का लेटिन नाम– फाइकस ग्लोमेराटा राक्सबर्ग (कुल-मोरेसी)

अन्य नाम–गूलर, अपुष्प, उदूम्बर, यजन, ऊमर । यह सदा हरा रहने वाला वृक्ष 10 से 15 मी. ऊँचा होता है। यह जंगली पेड़ है तथा बागीचों में भी मिल जाता है। इसके पुष्प रेसेप्टेकिल्स के रूप में बड़ तथा डंठल युक्त होते हैं। पकने पर लाल रंग के हो जाते हैं। पूरे भारतवर्ष में पाया जाता है।

**7. शनि–**

शनैश्चर की शरीर कान्ति इन्द्र नीलमणि के समान है। शरीर पर नील रंग के वस्त्र सुशोभित है। ये गीध पर सवार रहते हैं। शनि मकर एवं कुम्भ राशि के स्वामी हैं। इनकी महादशा 19 वर्षो की होती है। रत्नों में नीलम धारण करना चीहए। हवन पूजन के लिए शमी की लकड़ो का प्रयोग किया जाता है।

शमी का लेटिन नाम–प्रोसोपिस स्पीसीजेरा लिन (कुल–माइमोसेसी)

अन्य नाम–शमी,छयोकर,चोंकर, सफेद कीकर, हर्वीगंध, दुरितदामिनी

यह 10-20 मी. ऊँचा वृक्ष है फूल छोटे पीले रंग के त्रिकोण स्पाइक पर लगे होते है। फली 10-20 से.मी. लम्बी होती है। भारत वर्ष के सूखे भागों में पाये जाने वाला वृक्ष है ।

**8. राहु–**

राहु का मुख भयंकर है। शरीर पर काले रंग का वस्त्र धारण करते हैं और सिंह के आसन पर विराजमान हैं। राहु की महादशा 18 वर्ष की है । रत्नों में पिरोजा धारण करना श्रेयस्कर है। हवन पूजन के लिए दूब धास का प्रयोग किया जाता है।

दूब का लेटिन नाम साइनोडान डेक्टाइलान पेर्स. (कुल–पोऐसी)

यह हरा प्रोस्ट्रेट कोपिंग हर्व होता है जो 10-30 से.मी. लम्बा होता है। फूल छोटे स्पाइक के रूप में हरे तथा बैगनी रंग में होते है। पूरे भारतवर्ष में पाया जाता है।

**9. केतु–**

इनका शरीर धूम्र वर्ण का है, मुख विकृत है और ये गीध पर आसीन है। इनकी महादशा 7 वर्ष की है। शान्ति के लिए लहसुनिया पत्थर धारण करते हैं। हवन पूजन के लिए कुश का प्रयोग किया जाता है।

कुश का लेटिन नाम–डेस्मोस्टेकिया बाइपिन्नेटा स्टाफ,(कुल–पोऐसी)

अन्य नाम–कुश, दाब, पवित्र, यजन भूषण

यह बहुवर्षीय लम्बा पौधा है। फूल स्पाइकलेट के रूप में अवृंतीय तथा हल्के भूरे रंग के होते है। यह पूरे भारतवर्ष में गर्म तथा शुष्क जगहों में पाया जाता है।

## संदर्भ

1) डा. दीना नाथ तिवारीः ग्रंह नक्षत्र वाटिकाओं का रोपण मण्डलीय फल, शाक, भाजी पुष्प प्रदर्शिनी, इलाहाबाद पृष्ट **58-59. 2000**

२) नवग्रह–गीता प्रेस, गोरखपुर **1999**

# केला एक–गुण अनेक

*हर्ष चौधरी*
*केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा*

लैटिन भाषा में Banana (केला) का अर्थ है बुद्धिमान व्यक्तियों का फल (wise man fruit).

करोड़ो जनमानस का लोकप्रिय, सर्वसुलभ एवं सस्ता किन्तु अति पौष्टिक, सम्पूर्ण आहार केला एक महत्वपूर्ण और उष्णकटिबंधीय फलों में सबसे ज्यादा संख्या में उगाया जाने वाला फ़ल है। यद्यपि केले की पैदावार केवल उष्णकटिबंधीय देशो में ही होते है फिर भी उसकी खपत सम्पूर्ण विश्व में हैं। केला मानव द्वारा आहार के लिए प्रयोग में लाये जाने वाले सबसे प्राचीन फलों में से एक है। केला हिन्दू धर्म में अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है जिसका उल्लेख ईसा से 500 वर्ष पूर्व के पाये गये ग्रंथो, शिलालेखों में पाया गया है। केले के फलों व पेड़ो का व्रत , व्यौहारों व धार्मिक अनुष्ठानों में अपना विशेष स्थान है। केला जिसे विज्ञान की भाषा में म्यूजा (Musa) कहते है, अरबी भाषा में केले के नाम 'मज' अथवा 'मऊज' से लिया गया है। कुरान और प्राचीन अरबी साहित्य मे केले के पेड़ को 'जन्नत (स्वर्ग) का पेड़' कहा गया है। जिस प्रकार सेव के वृक्ष को पश्चिमी देशों में ईडन उद्यान का ''ज्ञान का वृक्ष'' (Tree of Wisdom) कहा जाता है। प्रसिद्ध वनस्पतिज्ञ लिनिअस (Linnaeus) ने शायद इन्ही किंवदंतियो से प्रभावित होकर केले का नाम म्यूजा पैराडायसियाका (Musa paradisiaca) रखा ।

केला वंश का उद्‌भव तथा कृषि विस्तार केन्द्र पूर्वी एशिया है जिनमें मुख्यतः भारत, बर्मा, मलाया, थाईलैंड, इन्डो चायना आदि देश सम्मलित हैं। समझा जाता है कि 5वी शताब्दी में अरब व्यापारी सर्वप्रथम केले को हिन्दमहासागर पार कर मालागासे गराराज्य ले गये जहां से यह धीरे धीरे पश्चिमी दिशा में फैलता गया।

केला विश्व में भारत, ब्राजील, पनामा, केन्या, उगांडा, तंजनिया, एक्वेडोर, जमैका, ग्वाटेमाला, मैक्सिको, चीन, फिलीपीन्स, थाईलैंड, मलाया, में बड़े पैमाने पर उगाया जाता है। भारत में केले की व्यवसायिक स्तर पर खेती मुख्यतः महाराष्ट्र, केरल, बंगाल, बिहार, कर्नाटक, तामिलनाडू में की जाती है। इसके अतिरिक्त, गुजरात, असम, उत्तरप्रदेश में भी केला बड़ी मात्रा में उगाया जाता है।

केला एक बहु उपयोगी वनस्पति है जिसके प्रायः सभी भाग किसी नकिसी रूप में उपयोग में लाये जाते हैं। इसके सभी खाद्य योग्य भाग जैसे फल, फूल और तने का भीतरी भाग (थोड़) आदि विटामिनों, लवणों व उर्जा से भरपूर हैं।

केला (Musa –म्यूजा) म्यूजेसी कुल से सम्बंधित है जिसमें दो वंश (Genus- -जीनस) रखे गये हैं–एन्सेटी बूस तथा म्यूजा लिनिअस। म्यूजा एक प्रकंदी, बहुवर्षी पेड़ो का वंश है जिसमें केवल एक शाखारहित छद्मस्तम्भ (unbranched pseudostem ) होता है जिसका निर्माएा समालग्न पर्ण आच्छादों से होता है। म्यूजा वंश को क्रोमोसोम संख्या व अन्य आकृतिक गुणों के आधार पर पाँच खंडो में विभाजित किया गया है–

१ – म्यूजा (यूम्यूजा)
२ – कैलिम्यूजा
३ – ऑस्ट्रेलिम्यूजा
४ - रोडोक्लैमिस
५ – इनसर्टी सेडिस

उपर्युक्त पाँचों खंडो में म्यूजा सबसे बड़ा व भौगोलिक दृष्टि से सबसे व्यापक विस्तार वाला खंड है जिसमें अधिकांशतः खाद्य रूप में प्रयोग में आने वाले केले आते हैं। विश्व में म्यूजा की लगभग 35 जातियों पाई जाती हैं। जब कि भारत में इसकी 18 जातियाँ मिलती हैं। केले की दो जातियाँ बल्बिसियाना (म्यू. सैपियेन्टम लिनिअस) तथा म्यू. पैराडिजियेका लिनिअस प्रचलित लोकप्रिय खाद्य किस्में हैं।

केला एक बहुवर्षी वृक्ष है जो अपने जीवन काल में केवल एक बार फल धारण करने के बाद स्वतः नष्ट हो जाता है (ऐसी वनस्पतियाँ जो अपने जीवन काल में केवल एक बार ही फूलती और फलती हैं उन्हें मोनोकार्पिक Monocarpic कहते हैं ) केले का छद्मस्तम्भ 75 से. मी. से 6 मीटर तक ऊँचा होता है जो हलके हरे या गहरे हरे रंग का होता है जिसकी बाहरी सतह गहरे भूरे या काले रंग के चकत्तों से आच्छादित रहती है। तने के उपरी सिरे पर 1-2.5 मीटर लम्बी व 40-60 से. मीटर चौड़ी पत्तियों का झुंड होता है जिनकी उपरी सतह गहरी हरी और चमकदार तथा निचली सतह हलके हरे रंग की होती है। इन पत्यिों के बीच से 30 से 90 से. मीटर लम्बा, शंक्राकार गहरे भूरे या बैगनी - लाल रंग का पुब्प क्रम निकलता हैजिसकी पुष्पावली–वृन्तो पर सहपत्र तथा पुष्प स्वतंत्र रूप से लगे होते हैं। अधिकतर जातियों में ये पुष्पक्रम नीचे की तरफ झूलता हुआ अथवा पृथ्वी के लगभग समानांतर बढ़ता है किन्तु कुछ जातियों में पुष्प क्रम सीधा ऊपर की दिशा में बढ़ता है।

यूँ तो केले में वर्ष भर फूल फल आते है किन्तु सामान्यतः अगस्त से दिसंम्बर माह को केले की फसल का मौसम कहा जा सकता है। केले के फलों को पेड़ पर ही लगें हुये पकने नही दिया जाता क्योंकि वे ऊपर से नीचे के क्रम में धीरे धीरे पकते है। इस कारण केले के गुच्छो को उचित समय पर पेड़ से काट कर पकने के लिये रखते हैं। भारत में केले के गुच्छों को पकने लिये बंद कमरे में टाँग कर धुँयें से भर दिया जाता है। जब केले का रंग पीला होने लगता है तो उन्हें गोदामों मे रखा जाता है जहाँ वह 2-3 दिनों में पक कर पीले हो जाते है और वहाँ सेवे बाजार में भेज दिये जाते हैं। किन्तु सभी जातियों व किस्मों के केले पक कर पीले नहीं होते, कुछ का रंग हरा ही रहता है जबकि कुछ जातियों में पके हुये केलों का रंग लाल होता है। केले के फलों की

लम्बाई भी उसकी जाति / किस्मों परनिर्भर होती है जो 2 इंच से लेकर 1.5 फीट तक हो सकती है। मैका एवं माइैको-पोषक तत्वो (Macro & Micro-nutrients) का भंडार केला अपने आपमें पूर्ण आहार है। एक पके हुये केले (100 ग्रा. वजन) में लगभग 120 किलो केलोरी उर्जा, 70% पानी, 25-30% कार्बोहाईड्रेट, 1-1.5% प्रोटीन तथा कुछ फाईबर और वसा का अंश होता है। इसके अतिरिक्त फास्फोरस, कैलशियम, पोटेशियम, लौह (Iron), जस्ता (Zinc) आदि खनिज भी केले में प्रचुर मात्रा में मिलते है साथ ही–ए. सी बी समूह (A, C, & B Group) के विटामिन्स की भी अच्छी मात्रा इसमें पाई जाती है। पके हुए केले के फलों के अतिरिक्त केले फूल (मोचा) तथा छद्मतने का भीतरी ठोस भाग का तरकारी के रूप में प्रयोग काफी लोकप्रिय है। केले के पत्तो का भोजनपात्र के रूप मे व्यापक स्तर पर प्रयोग होता है। केले की क्ई जातियों से उपलब्ध रेशों (fibres) का टेक्सटाईल उद्योग मे प्रयोग होता है । म्यूजा टेक्सटाइलिस जिसे मनीला हेम्प या अबाका नाम से जाना जाता है की खेती उसके उपयोगी रेशो के लिये बड़े पैमाने पर की जाती है। इन रेशो की डोरियाँ, केबिल रस्सी, जहाजों के लिये मोटे रस्से, पाल आदि बनाने मे अत्यधिक माँग है। जिल्दसाजी (Book-binding) में प्रयुक्त अबाका से बनी डोरी सर्वोत्तम मानी जाती है। इसके अतिरिक्त इन रेशों से मोटे कपड़े व पोशिश के कपड़े बनाये जाते हैं। जापान के प्रचलित घरों में अस्थाई दीवारें बनाने के लिये प्रयोग में लाये जाना वाला भारी व मोटा कागज अबाका से बनाया जाता है। भारत में अबाका या मनीला हेम्प से बने रस्से और रस्सियों का आयातमुख्यतः फिलीपीन्स, जापान और अमेरिका से किया जाता है।

केला खाद्यगुणों के अतिरिक्त औषधीय गुणों की भी एक बहुमूल्य रवान है। केले पर किये गये शोधों के फलस्वरूप इसके अनेकों अन्य औषधीय गुण प्रकाश में आये हैं जिनमें से कुछ मुख्य व महत्वपूर्ण गुणों का उल्लेख नीचे किया गया है–

- केला डिसेंट्री, डायरिया, कब्ज, पाईल्स आदि बीमारियों में आश्चर्यजनक रूप से कार्य करता है। पूर्ण रूप से पका केला डायरिया व डिसेंट्री में तथा अधपका केला कब्ज व पाईल्स में अत्यंत लाभकारी है। केला आँतो की भीतरी दीवारों को चिकनाई प्रदान कर एक हलके लैक्सेटिव का काम करता है तथा इसमे उपस्थित फाईबर भोजन से जल सोख कर बाउल मुवमेंट (bowel movement) को व्यवस्थित करता है।

- केले में आसानी से पचने योग्य प्राकृतिक शर्करा की उच्चमात्रा होती है। जो रक्तधारा में तुरंत मुक्त होने में सक्षम है। यही कारण है कि खिलाड़ी तुरंत उर्जाप्राप्ति के लिये खेलने से पहले केले का सेवन करते हैं।

- केले में उपस्थित क्षारीय भस्म आमाशय की अम्लता (acidity), गैस्टाईटिस, पेप्टिक अल्सर जैसे रोगों में लाभकारी है। केला आमाशय की भीतरी दीवार द्वारा श्लेष्म (Mucous) बनाने की प्रक्रियाकी गति को बढ़ाने में सहायक है इस कारण पेट के अल्सर के रोगियों के लिये लाभप्रद है।

● पोटेशियम जो एक महत्वपूर्ण इलेक्ट्रोलाईट (electrolyte) है जो शरीर की माँसपेशियों तथा नाड़ियों (nerves) की क्रियाओं को सामान्य बनाये रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। केले में पोटेशियम प्रचुर मात्रा में मिलता है। पके हुये केलों की तुलना में कच्चे केले व इसके फूलों में पोटेशियम की मात्रा दो गुने से अधिक होती है। पोटेशियम का रक्तचाप (Bloof-pressure) से भी सीधा सम्बंध है। पोटेशियम आहार को क्षारीय बना कर हड्डियों के स्वरूप व घनत्व (density) को बनाये रखता है। आघात से होने वाली मृत्युओं (Stroke-releated deaths) की घटनाओं की दर उन व्यक्तियों मे अधिकपाई गई है जिनके आहार में पोटेशियम की मात्रा कम पाई गई है। दूसरे अन्य पोषक तत्वों की तरह पोटेशियम भी शरीर में लम्बे समय तक संचित नहीं रह सकता और कठिन परिश्रम अथवा व्यायाम के परिणामस्वरूप पसीने के साथ शरीर के बाहर चला जाता है जिसके फलस्वरूप शरीर मे इसको कमी उत्पन्न हो जाती है। डायरिया, डिसेन्ट्री व लगातार उलटी और डिहाईड्रेशन भी इसकी कमी पैदा करते है। जिसमे माँसपेशिओ में दर्द, अव्यवस्थित हृदयगति, स्फूर्ति का ह्रास, स्नायु तंत्र का कमजोर पड़जाने जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं। ऐसे समय में केला पोटेशियम की कमी को तुरंत दूर करने के लिए सस्ता एवं आसानी से उपलब्ध माध्यम है।

● केला विटामिन-बी समूह का एक आदर्श स्रोत है। इस समूह का विटामिन बी-6 लाल रक्त कोशिकाओं के बनने में सहायता करता है और होमोसिस्टीन के स्तर में कमी लाकर हृदयघात के खतरे को काफी हद तक कम करने में सहायक है।

● स्त्रियों के लिये, जो गर्भनिरोधक गोलियों का सेवन करती है, केला उनमें विटामिन बी-6 की कमी को दूर करने को क्षमता रखता है।

● वैज्ञानिक खोजो से पता चला है कि पके और कच्चे केले के गूदे में एंजिओ-टेनसिन को निष्क्रिय कर सकने वाले इनजाइम इनहिबिटर (angiotensin converting enzyme inhibitors) पर्याप्त मात्रा में होते है जो उच्च रक्त-चाप ग्रसित लोगों का रक्त चाप नियंत्रित करने में प्रभावी भूमिका निभाते है।

● लौह (iron) शरीर के विभिन्न अंगों व मॉसपेशियों में प्राणवायु आक्सीजन पहुँचाने में सहायता करता है। शरीर में इसकी कमी आलस एवं कमजोरी के लक्षण पैदा करती है। विशेषकर स्त्रियों और शाकाहारियों में लोहे की कमी सामान्य बात है जो केले के सेवन से सरलता से दूर की जा सकती है। पका केला बहुत सरलता से पच जाता है जिस वजह से ३ माह के शिशु के लिए भी भलीभाँति मसला हुआ केला, दूध व शक्कर का मिश्रण अत्यंत सुरक्षित, पुष्टिकर, सुपाच्य आहार है।

८) शारीरिक प्रक्रियाओं के फलस्वरूप उत्पन्न व्यर्थ व त्याज्य पदार्थों में से एक–यूरिक एसिड गुर्दो द्वारा मूत्र के साथ शरीर से बाहर कर दिया जाता है। किन्तु कभी कभी यूरिक एसिड की मात्रा ज्यादा हो जाने से ये हड्डियों के जोड़ो मे एकत्र होकर गठिया रोग को जन्म देता है। केला यूरिक एसिड की इस बढ़ी मात्रा को शरीर से बाहर निकालने मे सहायक सिद्ध हुआ है।

आज वैज्ञानिक डायरिया, डिप्थोरिया, पोलिओ, मीजिल्स, पीलाज्वर (yellow fever) आदि जैसे रोगों की वैकसीन (vaccine) केले से बनाने में प्रयासरत हैं। इस वैकसीन के उपल होने के बाद वैक्सीन बनाने व लगाने की मंहगी और समय लगने वाली प्रक्रिया, मंहगे उपकरण, पैरामेडिकल स्टाफ आदि की बचत की जा सकेगी। बस बाजार से ये औषधीय गुणों वाले केले लाकर खाइये और इन बीमारिओं से छुटकारा पाइये।

इसी प्रकार विश्व के अनेकों देशों मे ट्रांसजेनिक केले (Transgenic banana) विकसित करने के लिए शोध कार्य तेजी से चल रहे हैं। अमेरिकी वैज्ञानिक हिपेटाईटिस-बी विषाणु के विरूद्ध जेनेटिक इंजीनियरिंग द्वारा एक एंटीजेन (antigen) युक्त केले का विकास कर रहे हैं जिनके सेवन से शरीर में किसी विषाणु अथवा जीवाणु से रक्षा कि लिये आवश्यक ऐन्टीबाडीज स्वतः बन जायेंगी।

पके केलों का भंडारण एक बड़ी समस्या है क्योंकि पका केला बहुत जल्द खराब हो जाता है। वास्तव में केले का पकना कार्बनडाई अक्साइड और इथाइलीन हारमोन के बनने के परिणाम स्वरूप होता है और ये केले में निहित क्ई (Genes) द्वारा निर्देशित होता है जिनमें बायोटेक्नोलाजी द्वारा फेर बदल कर केले के पकने की क्रिया को नियंत्रित किया जा सकेगा। भारत में नेशनल बोटानिकल रिसर्च इंस्टीटयूट, लखनऊ ने इस दिशा में आशातीत सफलता पाई है और केले को पकाने में सहायक जीन्स को चिन्हित कर लिया है। इन जीन्स की कार्यविधि में परिवर्तन कर उन्हे वापस केले मे प्रविष्ट करा दिया जायेगा। इस प्रकार की परिवर्तित जीन्स केले को पकाने की प्रक्रिया को धीमा कर लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जा सकेगा।

तो आइये, इस चमत्कारी केले को अपने दैनिक आहार में सम्मीलित कर अपने शरीर को स्वस्थ व रोगमुक्त रखने का आसान और सस्ता नुस्खा अपनाने में और देर न करे।

---

# उत्तरांचल राज्य की वनस्पति – एक विहंगम दृष्टि

सर्वेश कुमार
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून*

प्राचीन काल से ही वेद पुराणों में उत्तराखंड के नाम से वर्णित नवगठित राज्य उत्तरांचल की स्थापना दिनांक **9** सितम्बर **2000** को हुई। उत्तर प्रदश के गढ़वाल व कुमायूँ मण्डल, सहित **13** जिलों को अलग कर गठित किये गये इस पर्वतीय राज्य का क्षेत्रफल लगभग 53485 वर्ग कि.मी. है। यहाँ का प्राकृतिक सौन्दर्य, अनुपम अलौकिक व अवर्णनीय है। इस त्तेत्र की हिमाच्छादित पर्वत श्रृंखलाए, कलकल करते झरने व नदियां एवं मनोहारी दृश्य आगन्तुक को बरबस ही अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। इस क्षेत्र की सुन्दरता के वशीभूत होकर ही देवताओं ने भी यहाँ अपना निवास बनाया है, ऐसी मान्यता है। हिन्दुओं के विश्वप्रसिद्ध तीर्थ स्थानों–बदरीनाथ, केदारनाथ गंगोत्री व यमुनोत्री के अतिरिक्त अन्य अनेकों तीर्थ स्थलों, मठों व आश्रमों ने इस सम्पूर्ण क्षेत्र को ''देवभूमि'' के रूप में प्रतिष्ठित किया है। यहाँ के वातावरण को नैसर्गिक सुन्दरता प्रदान करने में यहाँ के हरित आवरण का विशेष योगदान है जिसका निकट जाकर अवलोकन करने से यहाँ की विशाल वानस्पतिक विविधता का स्पष्ट ज्ञान होता है। पश्चिमी हिमालय की गोद में बसा होने के कारण यहाँ उपोष्ण कटिबंधीय से लेकर हिमाद्रि वनस्पति तक के सहज ही दर्शन हो जाते हैं। विश्व प्रसिद्ध ''फूलों की घाटी'', नंदा देवी जीव मण्डल आरक्षित क्षेत्र, कॉर्बेट नेशनल पार्क, गोविंद पशुविहार व अन्य अनेकों वन्यजीव अभयारण्यों को अपने आगोश में समेटे उत्तरांचल राज्य हमारे देश का एक समृद्ध जैव विविधता युक्त क्षेत्र है जहाँ केवल पुष्पीय पौधों की ही 4000 से अधिक जातियाँ पाई जाती हैं। इनमें अनेकों औषधीय, सुगन्धित, सजावटी व आर्थिक महत्व के पादप सम्मिलित हैं। उत्तरांचल में पाये जाने वाले वनों को निम्न चार श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

तराई क्षेत्रों की वनस्पति – उत्तरांचल के हरिद्वार व ऊधम सिंह नगर जिले के तराई क्षेत्र की वनस्पति इसी श्रेणी के अन्तर्गत आती हैं। इन त्तेत्रों में कृषि की बहुलता के कारण प्राकृतिक वनस्पति यत्र तत्र ही कुछ क्षेत्रों में दिखाई पड़ती है। यहाँ पाये जाने वाले वृक्षों में बरगद, पीपल, अंजीर, गूलर, पिलखन, शीशम, साल, जामुन, नीम, रैनी, कचनार, भीमल, हल्दू, अमलतास तथा मित्रागाइना पार्वीफ्लोरा आदि हैं। झाडियों में करोंदा, करीपत्ता, कनेर, अडूसा, बेरी, किन्गोड़, हिसालू, कचरी, बुडफोर्डिया फ्रूटीकोसा, ग्रीविआ हिर्सुटा तथा कोलेब्रुकिआ अपोजिटीफोलिया आदि हैं। इन क्षेत्रों की शाकीय वनस्पति के मुख्य अवयव आर्टोमिसिया की जातियां,

इन्डीगोफेरा की जातियां, केसिया की जातियां, क्लीरोडन्ड्रम इन्फॉर्चुनेटम, गोखरू, बन तुलसी, पुनर्नवा, इकाइनाप्स इकाइनेटम, वर्नोनिआ साइनेरिया, माल्वैस्ट्रम कोरोमंडलिकम, सर्पगन्धा आदि हैं किन्तु अधिकतर क्षेत्रों में खेती होने होने के कारण मौसमी फसलों-धान, गेहुँ, मक्का, बाजरा तथा गन्ना का भी बाहुल्य है। तेजी से बढ़ रही गाजरघास '' पार्थेनियम हिस्टेरोफोरम'' व लेन्टाना की झाड़ियों का इस क्षेत्र की वानस्पतिक विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

उपोष्ण क्षेत्रकेवन और वनस्पति – 600 से 1500 मी. तक ऊँचाई वाले विशुद्ध साल के वनों व मिश्रित वनों से युक्त इस क्षेत्र में मुख्यतया झींगन, शीशम, हल्दू, रैना, जामुन, सेमल,कचनार चिऊरा पूला, करंज, अमलतास, हरसिंगार, कुसुम, अंजीर बावली, मित्रागाइना पार्वीफोलीआ, मकारंगा पस्चुलेटा, कैलीकार्पा आर्बोरिआ, फाइकस व टर्मीनेलिया वंशो की जातियां तथा अन्य अनेकों वृक्ष का संयोजन मिलता है। यहाँ पाई जाने वाली झाड़ियो में गण्डेला, अडूसा, जंगली चमेली, करौंदा, क्लीरोडेन्ड्रम विस्कोसम, सोलेनम वंश की जातियाँ, कैलीकार्पा मेकाफिल्ला, वुडफोर्डिया फ्रूटीकोसा, डोडोनिआ विस्कोसा आदि तथा शाकीय पादपों में सर्पगन्धा, असगंध, कलिहारी, ब्राहमी, सतावर, बच, कॉस्टस स्पेसीओसस, रूबिआ कॉर्डिफोलिया, डायोस्कोरिआ डेल्टॉइडिआ, आइपोंमिआ की जातियाँ, रोजा तथा यूट्रीकलेरिया की जातियाँ मुख्य वनस्पतियां है।

शीतोष्ण क्षेत्र के वन और वनस्पति – बुरांस, काफल, लायोनिया ओवेलीफोलिया तथा बांस की अनेकों जातियों वाले चौड़ पत्तों वाले वृक्षों तथा शंकुधारी वन इस क्षेत्र की वनस्पति के प्रमुख अवयव हैं। शंकुधारी वनों में चीड., देवदार, कैल, एबीज् आदि के विशुद्ध स्तम्भों के अतिरिक्त थुनेर की उपस्थिति इनको सुन्दरता प्रदान करती हैं । शीतोष्ण वनों के ढलानों पर कीटभक्षी, परजीवी व मृतोपजीवी पौधों की जातियां भी उगती देखी जा सकती हैं जिसमें यूट्रीकुलेरिया, ड्रासेरा व पिन्विकुला, मोनोट्रोपा युनीफ्लोरा, बेलेनोफोरा इन्वॉल्यूक्रेटा, आर्स्युथेबियम, स्कुरूला, डेन्ड्रोथ्रि व विस्कम की जातियों के नाम उल्लेखनीय हैं। अन्य उपयोगी वनस्पतियों में एकोनिटम की जातियां, चिरायता, पाषाण भेद, डायोस्कॉरिया डेल्टॉइडिया, पीओनिया इमोडी व एन्गलिका ग्लॉका इस क्षेत्र की वानस्पतिक विविधता के मुख्य अवयव हैं।

उप हिमाद्रि व हिमाद्रि वन क्षेत्र – उप हिमाद्रि व हिमाद्रि क्षेत्र के वृक्षों में कैल, एबीज जैसे शीतोष्ण अवयवों के अतिरिक्त भोजपत्र, एसर, प्रूनस तथा सेलिक्स की जातियां प्रमुखता से पाई जाती हैं। यहाँ पाई जाने वाली झाड़ियो में रहोडोडेन्ड्रान बर्बेरिस, रोजा, कॉटनईस्टर, राइबेस व जुनीपेरस की जातियां तथा शाकीय वनस्पति में प्राइमुला, पोटोन्टिला, एस्टर, सेक्सीफ्रेगा, पेडीकुलेरिस,कॉरीडेलिस, डैल्फीनियम, मैकॉनॉप्सिस, सउसुरिया र्हीअम, साइलिन, पॉलीगोनम व एक्टिआ आदि वंशों की जातियों का बाहुल्य मिलता है। इन्हीं क्षेत्रों में पाये जाने वाले घास के मैदानों जिन्हें स्थानीय भाषा में बुग्याल कहते हैं, में प्रचुर वानस्पतिक विविधता के दर्शन होते हैं। इन क्षेत्रों में पाये जाने वाले कुछ प्रमुख औषधीय पौधों में कुटकी, जटामांसी, डोलू, बालचरल हत्थाजड़ी, पापड़ी

आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

उत्तरांचल के वनों में ऐसे अनेकों पौधे मिलते हैं जिन्हें स्थानीय निवासी देवपूजा के लिये उपयोग में लाते हैं। ब्रह्मकमल, जिसे केदारनाथ शिवलिंग पर चढ़ाया जाता है, यहाँ का एक अति विशिष्ट पुष्पी पौधा है जो 3500 मीटर या उससे अधिक ऊँचाई पर ही मिलता है। इसके अतिरिक्त अन्य पवित्र माने जाने वाले पादपों में तीमरू (जेन्थोजाइलम आर्मेटम), बेल (एग्ले मोर्मेलोस), पान्या (प्रूनस पुडम) स्कीमीआ लॉरिओला, प्राइमुला डेन्टीकुलेटा, आदि विभिन्न देवी देवताओं की मूर्तियों पर चढ़ाये जाते हैं । जोशीमठ में आदि शंकराचार्य द्वारा रोपित पवित्र शहतूत का वृक्ष भी अपने विशाल आकार व भव्यता के कारण आगन्तुकों को बरबस ही आकर्षित करता है। उत्तरांचल के वानस्पतिक अजूबों में चिलगोजा के वृक्ष पर परजीवी के रूप में उगने वाला सूक्ष्मतम पादपों में एक आर्स्युथोबियम माइन्यूटिस्सीमम, एशिया का सर्वाधिक लंबा उत्तररकाशी जिले में उगने वाला चीड़ वृक्ष तथा ब्यासी के निकट पाया जाने वाला अपनी लम्बाई के लिये प्रसिद्ध ''राजा साल'' आदि के अतिरिक्त कीटभक्षी, परजीवी व मृतोपजीवी पौधों की अनेकों जातियां तथा शीत मरूस्थली क्षेत्रों के लेमिअम रहाम्बाँइडिअम, थाइलेकोस्पर्मम सीस्पीटोसम व अेकन्थोलीमाँन लाइकोपोडियओइडिस आदि आते हैं।

उत्तरांचल में पुष्पी पौधों की सौ से अधिक जातियां स्थानिक हैं अर्थात वे केवल इसी क्षेत्र में मिलती हैं अन्यत्र नहीं। अरेनेरिआ फेरूजिनिआ, जैन्शिआना टेट्रासेपला, जै० सेजीनाइडिस, मीबोल्डिआ सेलीनाँइडिस तथा ट्रकीकार्पस टकील आदि ऐसी स्थानिक जातियों के कुछ उदाहरण हैं।

उत्तरांचल में सजावटी पौधे भी प्रचुरता से पाये जाते हैं। इनमें आर्किड, एस्टर, प्राइमुला, पोटेन्टिला, एनीमाँन, पैडीकुलेरिस व जिरेानियम आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आर्किड्स प्रकृति के वे अनमोल उपहार हैं जो पृथ्वी के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी अनुपम छटा का स्पष्ट आभास देते हैं। उत्तरांचल में आर्किड की लगभग 225 जातियां मिलती है कुछ खूबसूरत आर्किड जातियों में लेडी स्लीपर आर्किड, रिन्कीस्टाइलिस, डेन्ड्रोबियम, थूनिया, सीलोगाइन, सिम्बीडिअम आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उत्तरांचल राज्य प्राकृतिक सौन्दर्य का धनी होने के साथ–साथ जैव विविधता की दृष्टि से भी हमारे देश का एक अति महत्वपूर्ण क्षेत्र है जिसमें पर्यटन व आयुर्वेद औषध उद्योग के विकास की प्रचुर सम्भावनाएं हैं। किन्तु विकास के लिये योजनाएँ बनाते समय पूर्णतया सावधानी रखनी होगी। समृद्ध जैव विविधता वाले इस क्षेत्र का भंगुर परितन्त्र द्रुत विकास के नाम पर अधिक छेड़–छाड़ करने की आजादी नहीं देता । यहाँ की वानस्पतिक विविधता को एक अन्य बड़ा खतरा विदेशी खरपतवारों विशेषकर लैण्टाना व पार्थीनियम के आक्रमण से है जिन्होंने राज्य के एक बड़ हिस्से पर अतिकमण कर लिया है व देशज वनस्पतियों की सामान्य वृद्धि को प्रभावित कर शनैः-शनैः उनके अस्तित्व को ही चुनौती दे डाली है। पर्यावरणविद्ों को इस समस्या के निराकरण हेतु तत्काल गम्भीर उपाय करने होंगे ।

# गढ़वाल हिमालय में पर्यावरण एवं पादप संरक्षण– एक विवेचना

*अनीस अहमद अन्सारी, रमेश चन्द्र श्रीवास्तव,*
*हरीश चन्द्र पाण्डे*
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता*

हिमाच्छादित हिमालय अनेक जल स्त्रोतों का उदगम् स्थल है। सदियों से हिमालय मानव को अपनी तरफ आकर्षित करता रहा है। यहां पर उपस्थित विभिन्न प्रकार की वन संपद,वैज्ञानिकों शोधार्थियो आदि को अपने तरफ आकर्षित करती रही है। इस क्षेत्र की जैव विविधता का अनेक प्रकार से दोहन किया गया है। फलस्वरूप यहां पाई जाने वाली अनेक वनस्पति जातियाँ अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही हैं। शहरीकरण की अंधी दौड़ ने इस पहाड़ी भूभाग में नई नई अनावश्यक सड़को को जन्म दिया, परिणाम स्वरूप हमें भूरखलन तथा अन्य विनाशकारी परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा है। मैदानी क्षेत्रों में विनाशकारी बाढ, उपजाउ भूमि का ह्रास तथा अन्य विनाशकारी परिस्थितियां हर वर्ष देखने को मिल रही हैं। क्षेत्रवासियों द्वारा जलावन की लकड़ी के लिए जंगलों का कटान हो रहा है। जो पादप संरक्षण के लिए एक बडी समस्या है। ऊन्नीसवीं शताब्दी में ब्रिटिश सरकार द्वारा वनों की सुरक्षा हेतु अनेक कदम उठाये गए। इस दिशा में डीटिच ब्रान्डिस (1873) का योगदान सराहनीय रहा है। वर्तमान सदी के प्रारम्भ में कैम्पबेल (1909) ने गढ़वाल के लिए एक वन नीति बनाई, इसमें पहाड़ के ऊंचाई वाले क्षेत्रों को वनों के रूप मे सुरक्षित किया गया इसमे वनों के साथ दूसरे आर्थिक महत्ब के पौधों को भी संरक्षण मिला । जलाउ लकड़ी के रूप में चीड़ के साथ चौड़ी पत्तियों वाले पेड़ो का भी कटान होने लगा जिससे इस क्षेत्र में पानी के क्षेत्रों में कमी होने लगी है तथा पहाड के पारिस्थितिकतंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पडा है।

हिमालथ के पर्यावरण व पादप संरक्षण हेतु सरकार द्वारा अनेक योजनाओं पर अमल करने के उपरान्त भी इस दिशा में ऐच्छिक लक्ष्य प्राप्त नही हो सका इससे स्पष्ट है कि सरकार की भारी भरकम योजनायें बिना स्वयं सेवी संस्थाओं तथा स्थानीय निवासियों के सहयोग से सफल नही हो सकतीं। गढ़वाल का चिपको आन्दोलन वहाँ की जागरूक ग्रामीण महिलाओं की देन है। स्थानीय निवासियों ने पेड़ों के कटान से क्षेत्र के बिगड़ते पर्यावरण के महत्व को समझा तथा क्षेत्र की महिलाओं ने पेड़ों को ठेकेदारों द्वारा काटे जाने से बचाने हेतु प्राणों की बाज़ी लगा दी। आज इस आन्दोलन को मैगसेसे पुरस्कार प्राप्त श्रीसुन्दरलाल बहुगुणा तथा श्री चण्डीप्रसाद भट्ट जैसे लोग आगे बढ़ा रहे हैं। यही कारण है कि चिपको आन्दोलन के तर्ज पर आज

पूरे देश में कई संस्थायें पर्यावरण बचाव अभियान में अपनी सक्रिय भागेदारी कर रही हैं। चिपको ओन्दालन की सफलता से उसे विदेशों में सहानुभूति मिली।

स्वयं सेवी संस्थायें ही कुछ हद तक लकडी माफियाओं पर लगाम लगाने में सफल हुई हैं। चिपको आन्दोलन न केवल क्षेत्रीय वनस्पति का दोहन रोकने हेतु संघर्ष कर रहा है अपितु टेहरी बांध जैसी भारी भरकम विद्युत परियोजनाओं का भी विरोध कर रहा है। इस प्रकार के बड़े बाँधों के बन जानेसे क्षेत्र का बड़ा भूभाग जल मग्न हो जायेगा परिणाम स्वरूप क्षेत्र की वनस्पति भी पानी में डूब जायेगी।

हिमालय क्षेत्र के पादप संरक्षण में क्षेत्रीय जनजातियों के योगदान को नकारा नही जा सकता, अनेक पौधों को जनजातियों द्वारा पवित्र माना जाता है, इन वृक्षों को काटना अपुण्य कारक समझा जाता है। गढ़वाल में फूलों की घाटी, रूपकुण्ड, हेमकुण्ड साहिब आदि महत्वपूर्ण स्थल अपनी विशिष्ट प्राकृतिक सुन्दरता, तथा वनस्पति सम्पदा के कारण ही पर्यटकों, वैज्ञानिकों, शोधार्थियों को बरबस अपनी ओर आकर्षित करती हैं। स्मिथ तथा होल्डस्वर्थ 1931 में सर्वप्रथम भयुन्डर घाटी पहुचें। यहां के रंग बिरंगे फूलों तथा विविध वनस्पति सम्पदा को देखकर इस घाटी को फूलों की घाटी नाम नवाज़ा।

आज पूरे देश में विकास के नाम पर प्रकृति का दोहन हो रहा है यह वैज्ञानिकों के लिए चिन्ता का विषय रहा है। यहां की वनस्पति का दोहन तथा क्षेत्र में बन रही सड़के,मृदा अपरदन का प्रमुख कारण है। इसका प्रमाण मैदानी क्षेत्रों में विनाशकारी प्रलयकारी बाढ़ के रूप में देखने को मिलता है। सरकार द्वारा पारित नया वन अधिनियम 1980 कुछ हद तक क्षेत्र में वनों का कटान रोकने में सफल रहा है। पर्वतीय पर्यटक स्थलों में पर्यटकों द्वारा फेंका गया जैविक कूड़ा भी पर्यावरणको अस्थिर कर रहा है। आज क्षेत्र में स्थित कई राष्ट्रीय उद्यानों के अधिकारी पर्यटकों को जैविक कूड़ा पर्यटक स्थलों पर न फैंकने का निवेदन करने के साथ-२ जूट या सूत की बनी थैलियाँ उन्हे उपलब्ध करा रहे हैं। सरकार द्वारा क्षेत्रीय वनस्पति संरक्षण हेतु विभिन्न राष्ट्रीय उद्यानों के निर्माण की स्वीकृति नन्दादेवी तथा उत्तराखण्ड बायोस्पीयर रिजर्व की मंजूरी आदि ऐसे कदम है जो पर्यावरण संरक्षण की सरकार की पक्की मंशा उजागर करते है। यहां के वनों में प्रतिवर्ष लगने वाली आग भी जंगलों के विनाश का प्रमुख कारण है। इससे हरवर्ष अंकुरित होने वाले पौधे नष्ट हो जाते है। चीड़ के जंगलों का बांज के जंगलों का स्थान ले लेने से क्षेत्र में जल स्त्रोतों में कमी उजागर हुई है।

अन्त में प्रत्येक देशवासी का यह परम कर्तव्य है कि हम पर्यावरण एवं जीवसम्पदा के संरक्षण हेतु सरकार द्वारा उठाये गये कदमों का अनुसरण करें। क्षेत्रीय ग्रामीणों को पर्यावरण संरक्षण का महत्व बतायें। क्षेत्रिय जन लकड़ी के स्थान पर कुकिंग गैस का भोजन निर्माण हेतु उपयोग करें तभी हम अपनी इस अमूल्य धरोहरको आने वाली पीढ़ियों को सौपने में समर्थ होंगें।

# अरूणाचल प्रदेश की वनस्पति विविधता सर्वेक्षण एवं संरक्षण

*एस० एल० गुप्त*

*मध्य क्षेत्र, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, इलाहाबाद*

वर्तमान पीढ़ी शायद 'नेफा' के नाम से अनभिज्ञ हो परन्तु अस्सी के मध्य दशक तक 'नेफा' के नाम से जाना जाने वाला अरूणांचल प्रदेश उत्तर-पूर्व भारत के उन सात राज्यों में से एक है जो 'सात बहनों' के नाम से प्रसिद्ध है। अरूणाचंल प्रदेश, जिसे 'उगते सूर्य का प्रदेश' (Land of Rising Sun) भी कहा जाता है, भौगोलिक रुप से 26°28'-29°30' उत्तर अक्षांश और 91°30'-97°30' पूर्व देशांतर के मध्य स्थित है।

अपनी सांस्कृतिक विरासतों, जनजातीय विविधताओं के साथ-साथ वनस्पति विविधताओं के लिए प्रसिद्ध यहं प्रदेश भारत का एकमात्र ऐसा राज्य है जहां की लगभग 65 प्रतिशत भूमि अभी भी वनों से आच्छादित है। विश्व में मौजूद 12 'हाट स्पाट' क्षेत्रों में से 2 भारत में ही है। पश्चिमी घाट के अतिरिक्त दूसरा 'सघन केन्द्र' (हाट स्पाट) अरूणाचल प्रदेश ही है, जिसकी वनस्पति विविधता का अनुमान केवल इस बात से लगाया जा सकता है कि यह प्रदेश लगभग 6000 पुष्पी प्रजातियों के अलावा लगभग 700 खुबसूरत रंग बिरंगे मन-भावन आर्किर्डो, 400 फर्न और जिम्नोस्पर्म प्रजातियों को अपने आप में संजोए हुए है। इसके अतिरिक्त निम्न कुल (क्रिप्टोगैम्स) की अनगिनत प्रजातियां जैसे शैवाल (Algae) , फफूंद (Fungi), शैवाक ( Lichens) और हरितोद्भिद (Liverworts) भी इस प्रदेश की शोभा में चारचांद लगाते है, जिन पर पुष्पी पौधों के मुकाबले बहुत कम ही अध्ययन हुआ है।

पुष्पी व अपुष्पी पौधों पर सर्वेक्षण अध्ययन हेतु पर्यावरण एवं वन मंत्रालय अधीनस्थ भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण ने अरूणांचल प्रदेश की राजधानी ईटानगर में सन् 1977 में एक क्षेत्रीय कार्यालय की स्थापना की जिसने प्रारम्भ में पुष्पी पौधों पर अपना सर्वेक्षण एवं गवेषणा केन्द्रित किया। इसके फलस्वरूप अरूणांचल प्रदेश की वनस्पतिजात नाम के पुस्तक का प्रारूप तीन खण्डों में तैयार किया है।

अरूणांचल प्रदेश की वनस्पति विविधता ने प्रारम्भ में अनेकों वैज्ञानिक को अपनी ओर आकर्षित किया जिनमें बूथ, ग्रिफिथ, बोर एवं बोरकिल आदि के नाम उल्लेखनीय है। जितनी विविधता वनस्पतियों में है, उतनी ही यहां की जन-जातियों में है। लगभग 23 जनजातियों में प्रमुख हैं : निशिंग, आदी, आपातानी, मोम्पा आदि। इनके भी लगभग सौ से

अधिक उप जन-जातियाँ हैं जो वनस्पति विविधता का भरपूर उपयोग अपने दैनिक जीवन की आवश्यकताओं जैसे भोजन, कपड़ा व औषधि आदि के लिए करती हैं। इस प्रदेश की विभिन्न व अनूठी परम्पराओं, जानकारियों, जैविक विविधता के विभिन्न उपयोगों और उनके संरक्षण हेतु यह जरूरी हो जाता है कि इन जन-जातिओं की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ उनकी संस्कृति का भी अध्ययन हो जिससे बहुमूल्य पादप विविधता के संरक्षण के साथ-साथ संस्कृति का भी संरक्षण हो सकें।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण का अरूणांचल प्रदेश परिमण्डल, जो लगभग 32 एकड़ में विस्तारित है, कटिबद्ध है और निम्न प्राथमिकताओं को अपनाया है जिनमें भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के प्राथमिक एवं अन्य उद्देश्यों को भी समुचित स्थान दिया है :–

1. दुर्लभ एवं संकटग्रस्त प्रजातियों का सर्वेक्षण और प्रायोगिक उद्यान में प्रवेशन।

2. परा स्थाने (Ex-Situ) एवं स्व स्थाने (In-Situ) पौध विविधता की प्राकृतिकता का अध्ययन।

3. जन-जातियों के उपयोग की वनस्पतियों तथा उनके पारम्परिक ज्ञान के उपयोग पर अध्ययन।

4. विभिन्न अर्किड़ों पर अध्ययन, नामकरण तथा प्रायोगिक उद्यान में प्रवेशन।

5. पादप संग्रहालय (Herbarium 'ARUN') 'अरूण' की देखभाल, तथा

6. अपुष्पी पौधों जैसे शैवाल पर अध्ययन, एवं सर्वेक्षण प्रारम्भ करना।

इस परिमण्डल के हर्बेरियम में लगभग 10,000 पुष्पी पौधों, आर्किड तथा फर्न के कुछ नमूने संग्रहीत हैं। इनमें से लगभग 4,000 नमूनों की पहचान की जा चुकी है। सर्वेक्षण दौरों से अब तक प्रायः 15-20% भाग का अध्ययन पुष्पी पौधों एवं आर्किड पर हुआ है। इनमें कुल 13 जिलों में से निम्न जिले शामिल हैं :– लोवर सुबनसिरी, अपर सुबनसिरी, वेस्ट कामेंग, ईस्ट कामेंग, पूर्वा एवं पश्चिमी सियांग, चांगलांग, लोहित और दिबांग घाटी का कुछ हिस्सा शामिल है। अल्प रूप से सर्वेक्षण किये जाने वाले जिलों में अपर सुबनसिरी और दिबांग घाटी का दक्षिणी भाग शामिल है।

यहां कार्यरत वैज्ञानिकों ने अरूणांचल प्रदेश के ऊंचे स्थानों पर पाये जाने वाले दुर्लभ पौधे काप्टिस तीता (मिश्मी तीता) के औषधीय गुणों का वर्णन किया है। इसके अलावा कई नये प्रजातियों का भी वर्णन किया है। इनमें मुख्य रूप से *इरिया लिंडले, इपिगोनियम, ओफियोराइजा टेलिवेलिएसिंस, हेडिचियम रेडिएटम, हेडिचियम रोबस्टम* तथा *रूबस घानाकान्टी* उल्लेखनीय है। आर्किडों में लेडीज स्लीपर, *सिम्बीडियम* तथा *डेन्ड्रोबियम* आदि जैसी दुर्लभ प्रजातियाँ मुख्य हैं। इस प्रदेश में देश का सबसे लम्बा आर्किड *मैलियोला फालकानेरी* भी पाया जाता है। इस मृतोपजीवी आर्किड की लम्बाई लगभग 3 मीटर होती है।

अरूणांचल प्रदेश की स्थानीक जातियों में *मेरिल्लियोपैनेक्स कार्डिफोलिया, रोडोडेन्ड्रान सान्तापाउई, लाईसीमोकिया सान्तापाउई, पाईया बेलाडोना, हेडीकियम वार्डो, ओबेरोनियासल्केटा, बोइमेरिया तिरपेंसिस* तथा *लैजिनेन्ड्रा अंडुलेटा* प्रमुख है।

अरूणांचल प्रदेश परिमण्डल द्वारा सन् 1987 से अब तक लगभग 25 सर्वेक्षण दौरे किए गये और इस मनोरम प्रदेश के लगभग 15-20% भागो का सर्वेक्षण पुष्पी पौधों हेतु किया गया। इसके फलस्वरूप लगभग 10,000 पुष्पी पौधों, आर्किडों एवं पर्णागों के नमूने 'अरूण' हर्बेरियम में प्रवेशित है। इनमें से लगभग 4000 नमूनों को पहचाना जा चुका है। इसके अलावा 'शैवाल पादपजात' परियोजना 1997-98 के अन्तर्गत दो प्राथमिक सर्वेक्षण किये गये। प्रायोगिक उद्यान में अन्य पौधों के अलावा *सायेथिया, एंजियोप्टेरिस इवेक्टा, डायप्टेरिस वालिचियाई* तथा *प्लेटीसेरियम एल्सीकार्नी* का भी प्रवेशन उल्लेखनीय है।

अपने मनभावन दृश्यों तथा वनस्पतिजात के लिए प्रसिद्ध इस प्रदेश का चप्पा-चप्पा एक अलग ही कहानी कहता है। इस सर्वाधिक हरे-भरे प्रदेश की वनस्पतिजात के सर्वेक्षण एवं संरक्षण में हम सबका सहयोग अपेक्षित हैक्योंकि अभी भी कई क्षेत्र ऐसे हैं जहां वनस्पति सर्वेक्षण का कार्य बिल्कुल सम्भव नही हो पाया है। इनमे दिबांग घाटी तथा पश्चिमी कामेंग जिलों का उत्तरी हिस्सा, लोहित जिले का उत्तर पूर्वी भाग तथा अपर सियांग क्षेत्र भी शामिल है।

इन कटिनाइयों के बावजूद भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण 'मटेरियल फार दी फ्लोरा आफ दि अरूणांचल प्रदेश' को प्रकाशित करने में सफल रहा है। इसमें अरूणांचल प्रदेश के लगभग 4055 पुष्पी पौधों (1096 एकबीज पत्री तथा 2959 द्विबीजपत्री) का वर्णन किया गया है। नाम्दफा वन्यजीव अभयारण्य के वनस्पति जात का प्रकाशन (लेखकः डा० एम० संजाप्पा) 1997 में हुआ है। अभी हाल ही में 'अरूणांचल प्रदेश की आर्किड' (लेखकः डॉ हर्ष चौधरी) का भी प्रकाशन सम्भव हुआ है। इसके अलावा अरूणांचल टाइम्स में शैवाल विविधता तथा नील हरितशैवालों की परिस्थितिकी, जैव खाद्य का प्रकाशन तथा अरूणांचल फारेस्ट न्यूज में पौधों की एवं जैव विविधता द्वारा (सूक्ष्म जीव के सम्बंध में) सतत विकास में योगदान शामिल हैं। नौवी पंचवर्षीय योजना के दौरान भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के प्राथमिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अनेक प्राथमिकताओं की ओर ध्यान दिया गया है। इनमें निम्नकुल के पादपजात जैसे शैवाल का सर्वेक्षण तथा स्थानीय परम्पराओं का पादपकुल के साथ सम्बन्ध जैसे उद्देश्य को भी रखा गया है। आशा की जाती है कि आने वाले वर्षो में आधुनिक सुविधाओं के साथ गहन सर्वेक्षण और संरक्षण हो सकेगा।

---

# मकड़ी सदृश पुष्पीय पौधा - (स्पाइडर आर्किड)

*पी. वी. श्रीकुमार*
*विनोद मैना एवं भोलानाथ*
*भा. व. स., पोर्टब्लेयर*

धैर्य, प्रयास एवं सहनशीलता आदि की दृष्टि में यहि हम 'मकड़ी (स्पाइडर) की तुलना महाभारत में वार्णित पाण्डवों की माता कुन्ती से करें तो पायेंगे कि जिस प्रकार माता कुन्ती ने महान कष्टों के सहने के बावजूद आशा एवं धैर्य नहीं खोये थे। 'मकडी ' भी अपनी बार-बार की असफलता के बावजूद अपने अथक प्रयासों से कलात्मक जाल को बुनने में तल्लीन रहती है, जिसे देखकर 'सर राबर्ट ब्रूश' को ये भान हुआ कि यदि मनुष्य असफलताओं के बावजूद लगातार धैर्य के साथ कार्य को पूरा करने के लिए प्रयास करता रहे तो अन्त में जीत उसी की होती है।

'ब्रूश' के अनुयायियों, वैज्ञानिकों, वास्तुविदों एवं आधुनिक कम्प्यूटर इंजिनियरों को भी 'मकडी' की चतुराई एवं कार्यकुशलता ने आश्चर्यचाकित कर दिया है/सभी ईर्ष्या करते हैं कि यह नन्हा सा जीव कितने अनूठे ढंग से इतना बारीक जाल बुनता हैं, जो कि कम्प्युटर की दुनिया के 'इन्टरनेट' एवं 'वर्ल्ड वाइड वेव' द्वारा भी सम्भव नही है। स्वयं के अस्तित्व को बनाये रखने के महान संकल्प के साथ 'मकड़ी' लगातर कलात्मक जाल को बुनती रहती है और उस जाल के मध्य में बैठकर घंन्टो अपने शिकार का इन्तजार करती है, ताकि उसे रूचिकर भोजन मिल सके ।

वनस्पति शास्त्र में उपलब्ध एवं प्राप्त विवरणों के अनुसार इस धरती पर असंख्य अनोखी वनस्पतियाँ विद्यमान हैं, जिसके कारण सम्पूर्ण धरातल पर अन्य जैविक घटकों का उदभव सम्भव हुआ । धरातलीय बनावट और जलवायु की विविंधता के परिणाम स्वरूप उस विशेष स्थान के अनुरुप वनस्पतियों और जीव-जन्तुओं का जन्म हुआ, जिनके रहस्यमयी तथ्यों की जानकारियां वैज्ञानिकों एवं शोंध कर्ताओं को समय-समय पर मिलती रही हैं, जिनका वैज्ञानिक नामकरण वस्तुविशेष के कुल, वंश और समुदाय के आंधार पर किया जाता रहा है। इतना ही नहीं, कुछ वनस्पतियों का नामकरण तो जीव-जन्तुओं की जातियों के नाम पर भी किया गया है, उदाहरणार्थ, 'स्पाइडर आर्किड'।

विश्व मे 'स्पाइडर आर्किड' की लगभग 30 प्रजातियाँ एवं बहुत सी संकर प्रजातियाँ पाई जाती है, जिन्हे 'अरेकनीस्' वंश के अन्तर्गत रखा गया है। ग्रीक भाषा में 'अरेक्नीस्' शब्द का अर्थ 'मकड़ी (स्पाइडर)' होता है। भारतीय उद्यानों में 'पीत पट्टी' (येलोरिबन), एवं 'लाल पट्टी' (रेड रिबन) वाले 'स्पाइडर आर्किड' प्राय पाये जाते हैं। हम 'स्पाइडर आर्किड' का संवर्ध्दन एवं प्रजनन इनकी कलमों

(कटिंग्स) के द्वारा सरलता के कर सकते हैं। ईंट के टुकड़े, नारियल की जटायें एवं लकडी के कोयले के मिश्रण में हम इनकी कलमों (कटिंग्स) को उगा सकते हैं। इनके विकास के लिए पर्याप्त मात्रा में सूर्य का प्रकाश एवं समय-समय पर एन पी. के. (17. 17. 17 ) का छिड़काव करते रहना चाहिए, जिससे अधिक से अधिक फूल खिल सकें। इनमें एक बार, एक साथ 15 से 30 तक फूल खिल सकते हैं, जिनका आकार 6 सेमी. तक मापा गया है। इनके पुष्प एक बार खिल जाने के बाद 30-40 दिनों तक ताजा बने रहते हैं। कोम या पीले रंग की पंखुड़ियों पर लाल या भूरे रंग के छींटे (धब्बे) इनके पुष्पों को मनमोहक एवं आकर्षक बनाते हैं। हमे इस प्रकार की अनोखी वनस्पतियों के विकास के प्रति सतत प्रयास करते रहना है।

---

# पेटेन्ट नियमों का भारत की वनस्पति विविधता पर प्रभाव

*देवयानी बसु*
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण*

भारत एक ऐसा देश है जिसकी जैव विविधता हमारी सांस्कृतिक विविधता से जुड़ी है। इसलिए आज हमें जरूरी हो गया है कि देश की प्राकृतिक सम्पदा बचाकर रखे। हमारा प्राचीन साहित्य जो जड़ी बूटियों के बारे में जानकारी देता है वह है चरक संहिता । सुश्रुत संहिता, केवल भारत नहीं बल्कि पूरी दुनिया इसका फायदा उठाती थी। भिन्न प्रदेश के जनजातियों ने जड़ी बूटियां के साथ अपना जीवन जोड़ लिया है।

जैव संसाधनों की विविधता की दृष्टि से हमारा देश विश्व का समृद्धतम राष्ट्र माना जाता है। हमारे देश की भौगोलिक स्थिति से ऐसा हुआ है। सर्वेक्षण से मालूम पड़ता है कि भारत में 45 हजार प्रजातियां है, जिनमें 15 हजार पौधें, 5 हजार शैवाल, लगभग 2 हजार के आस पास लाइकेनों 20 हजार कवकों व 3 हजार के आसपास अपुष्पी पौध है।

आज उद्योग और आधुनिकीकरण के नाम पर अन्धाधुन्ध वननाशन से हमारी वन सम्पदा समाप्त होती जा रही है। ब्राजील के रियो द जिनेरों में आयोजित विश्व सम्मेलन में जैव विविधता समझोतें को लागू कर दिया। अनेक देश जैव विविधता के संरक्षण, तथा उन पर पूरा मालिकाना हक के बारे में कानून बना चुके है। इस समझोते में यह स्वीकार किया गया है कि राज्य स्तर तक अपना अपना जैविक संसाधनों पर प्रभुसत्तात्मक अधिकार होगा। पिछले दस सालों से अन्तर्राष्ट्रीय चर्चा जैव विविधता के बारे में चल रही है। प्रश्न इस मुद्रदे पर टिका है कि इससे होने वाले परिणाम का लाभ सभी को कैसे मिलें व सब कोई इसे कैसे इस्तमाल करें।

इस सन्र्दममें विकसित देश पौधों के संरक्षण कानून तथा ''पेटेन्ट'' करने लगे है। क्योंकि उन्होनें अपना कानून बनाया है और उन्नत तकनीक भी उनके पास है। वह पारम्परिक व्यवहार के उपर जोर नहीं देते है। आज आजादी के 50 साल बाद भी हमारे पास कोई अपना कानून नहीं है ताकि हम अपने जैव संसाधनों को दोहन से बचा सके।

भारत के आविष्कार और सृजनता के स्तरों को बढ़ाने के लिए तत्काल पूरा ध्यान देना होगा। विश्व व्यापार संगठन में भारत के सम्मिलित होने के बाद एक बड़ा परिवर्तन होने जा रहा है। बौद्धिक सम्पदा का जनन, इसकी पकड़, प्रलेखन, संरक्षण और मानंकन, इसका दोहन आदि नये सन्दर्भ में बहुत ही महत्वपूर्ण होगे, ताकि हम चोरी, तस्करी रोक सके। कॉपीराइट व पेटेन्ट फाइल की कमी है। इसके लिए

पेटेन्ट साक्षरता तत्काल बढ़ाए जाने की जरूरत है। इसके बिना न तो हम अपने आविष्कारों को सही ढंगसे बचा पाएंगे और न ही अपने प्रतिद्वदियों को तय किए पेटेन्टों का सही अर्थ समझा पाएंग। क्योंकि हमारे पेशेवर लोगो द्वारा लिखे गए पेटेन्टों को दूसरे लोग सरलता से तोड़ मरोड़ कर लाभ उठा सकते है। इसलिए समिति व संस्थान बनाना होगा और यथाशीघ्र सर्वोच्च नियम के पेटेन्ट लिखने वाले विशेषज्ञों को तैयार करना होगा । ग्रामीण आदिवासी के पास जैव संसाधन और संरक्षण के बारे में विशेष जानकारी है इसलिए उन्हें भी इस अभियान में सम्मिलित करना अति आवश्यक है।

आज अत्याधुनिक तकनीक के जरिये हम नये चीजों की खोज में लगे हुए है । दूसरे देश उसे पाने के लिए विभिन्न कौशल अपनाते है। आज हमारी जैव विविधता संकटग्रस्त स्थिति में आ गयी है । 2 हजार प्रजाति विलुप्त हो गये है देशी व विदेशी कम्पनी अगर चाहे तो अनुसन्धान और जड़ी बूटियों से दवाई बना कर व्यवसायिक लाभ उठा सकता है। मगर इसकी सूचना स्थानीय संस्थान के पास होना जरूरी है, ताकि वे देख सके कि जड़ी बूटियों का दोहन कैसे हो रहा है। अमेरिकी कम्पानियां 80-85% प्रजातियां जीव जन्तु, पेड़ पौधों को पेटेन्ट कर चुके है।

एक शक्तिशाली देश का मतलब यह नहीं है कि वह बलवान हो। बल्कि वह बलवान है जो कि अपनें संसाधनों को कानूनी ढंग से बचा सके। राष्ट्रीय सुरक्षा तभी शक्तिशाली हो सकती है जब देश अपनी जैव विविधता संरक्षण और उसके सही उचित इस्तेमाल करें।

# अश्वत्थ (पीपल)–एक धार्मिक-वृक्ष

*उमाशंकर वैश्य*
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मध्यक्षेत्र, इलाहाबाद*

अश्वत्थ अर्थात् अश्व के समान बलवान। अथर्ववेद में इसी की ओर संकेत किया गया है–

'यथाश्वत्थ वानस्पत्यानारोह कृगूणेऽधरान्।'

अश्वत्थ वीर है जो अन्य वृक्षों के सिर पर पांव रखकर खड़ा हो जाता है जिस प्रकार खदिर (खैर)के वृक्ष के ऊपर अश्वत्थ उत्पन्न होता है, उसी प्रकार वीर पुरुष उत्पन्न होते हैं और शत्रुओं का वध कर देते हैं।

'पुमापुसः परिजातोऽश्वत्थ : खदिरादधि।'

प्रकृति-जगत के सभी वृक्षों में अश्वत्थ एक अत्यन्त क्षमतावान् शक्तिशाली वृक्ष माना गया है। मजबूत कंक्रीट की दीवाल, पत्थरों की छत, सड़क, चट्टान आदि कहीं पर भी इसका राई से भी नन्हा बीज केवल चिपकने मात्र की जगह लेकर अपनी जड़ बना लेता है और शीघ्र ही कंक्रीट व चट्टान की मजबूती को चुनौती देता अश्वत्थ का वृक्ष लहराने लग जाता है। इसकी जडे भीतर बहुत गहराई में भेद कर घँस जाती है और यदि शुरु में ही ध्यान न दिया जाय तो शीघ्र ही मजबूत से मजबूत मकान को भी गिरा देता है।

अश्वत्थ भारतीय संस्कृति, धर्म व आस्था का मूल रहा है। वैदिक काल से पूर्व मोहन-जोदड़ो व हड़प्पा कालीन सभ्यता की खुदाई से प्राप्त मृण्मय मोहरो में अश्वत्थ वृक्ष व उनके पत्ते दोनों ही अंकित मिले है। वृक्ष पूजा का महत्व पूर्व वैदिक सभ्यता में काफी रहा है। आर्यों ने इसेभी अपनी सभ्यता में समाहित कर लिया और अश्वत्थ शुद्ध वैष्णव वृक्ष मान लिया गया।

स्कन्द पुराण में अश्वत्थ को नारायण (विष्णु) और वट को शिव कहा गया है।

'अश्वत्थ रूपी भगवान्वट रूपी सदा शिवः।।'

गीता में स्वयं श्री कृष्ण ने कहा है कि वृक्षों में मैं अश्वत्थ हूँ–

''अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां''

सम्भवतः इसी कारण धार्मिक वृक्ष अश्वत्थ हिन्दू धर्म का प्रतीक बन गया।

अश्वत्थ का लेटिन नाम–फाइकस रेलीजियोसा लिन, (कुल-मोरेसी)

अश्वत्थ के अन्य नाम–अच्युतवास, बोधिद्रु, बोधिद्रुमः, चैत्यवृक्ष, शुभद, याजिक, देवात्मा, घनुर्बृक्ष, श्रीमान्, श्यामल, विप्र, मंगल्य, सेय्य, सत्य, शुचिद्रुमः,

गजभक्षक, गजपत्र, गुह्मपुष्प गुरू, कृष्णवास, केश्वालय, महाद्रमुः, पयित्रक, वृक्षराज, विशाला आदि इसके अनेक नाम इसको धर्मिक वृक्ष होने की पुष्टि करते हैं। साधारण भाषा में इसे पीपल भी कहते है जो संस्कृत शब्द 'पिप्पल' से बना है। संस्कृत में इसे 'क्षीर वृक्ष' भी कहा गया है क्योंकि इसकी टहनियों के तोड़ने पर दूध जैसा तरल पदार्थ निकलता है। लिंग पुराण में अश्वत्थ कों वृक्षों का पिता और पलक्ष (पाकर) को पितामह कहा गया है–

''वृक्षाणाश्चैव चाश्वत्थ प्लक्षश्च प्रपितामहः।।''

उत्तर वैदिक सभ्यता जब पुराणों की अन्तोक्तियाँ बननी शुरू हो गयी थीं तब उसके बाद बौद्धकालीन युग में अश्वत्थ और भी गौरवमय पद पर पहुँच गया। ऐसी मान्यता है कि शाक्य मुनि गौतम जब गया के पास तपस्या कर रहे थे तब अश्वत्थ के वृक्ष के नीचे ही उन्हे बोध –ज्ञान प्राप्त हुआ था और इसीलिये उस वृक्ष को बोधिवृक्ष कहा गया है और बौद्ध धर्म की स्थापना इस प्रकार हुई है। पूर्व एशियाई देशों में बौद्ध धर्म के प्रचार के साथ-साथ 'बोधि वृक्ष' की पूजा का विधान निश्चित किया गया है। लंका में अश्वत्थ को इसलिए 'बो' नाम से पुकारा जाने लगा है।

अश्वत्थ की गणना संसार के प्राचीनतम वृक्षों में मानी जाती है। अश्वत्थ की आयु अन्य वृक्षों की अपेक्षा अधिक मानी जाती है। चार-पांच सौ साल पुराने अश्वत्थ के वृक्ष गया, हरिद्वार, मथुरा, वाराणसी, प्रयाग आदि स्थानों में आसानी से दृष्टिगोचर हो जाते हैं।

यह एक विशाल वृक्ष है जो 30 से 40 मीटर तक ऊँचा होता है। जड़ से लगभग 5 मीटर ऊँचा जाने के बाद इसकी शाखाएँ फूटती है जो ऊपर की ओर जाने के बाद नीचे की ओर झुक जाती है। इसका वृक्ष विशाल होने पर भी प्लक्ष और वट की तरह घना नही होता है क्योंकि टहनियाँ ऊपर से नीचे को लटकती रहती है। इन टहनियाँ में काफी लचक होती है। मोटी शाखाओं को छोड़ शेष टहनियाँ झूमती रहती है। इसके पत्ते का निचला भाग गोलाई लिए हुए चौड़ा होता है और अगला भाग नुकीला लम्बा होता है। पत्ते में किनारे पर हल्की लहर भी होती है। पत्ते की नसें हल्के रंग की व काफी स्पष्ट होती हैं। इसके पत्ते पतले लम्बे डंठल के सहारे डंडियों से जूड़े होते हैं और जरा सी हवा का आभास पाकर कान के लोलक के समान कांपने लगते है। इन पत्तों की इस चंचलता के कारण ही इसका नाम ''चल दल'' पड गया है।

इसके फल पकने पर छोटे, गोल एवं बैगनी रंग के होते हँ जिन्हें वनस्पतिक भाषा में 'साइकोनस' कहा जाता है। गूलर की तरह फल के भीतर ही फूल भरे होते हँ इसलिए इसका नाम 'गुह्मपुष्प' भी है अर्थात् छिपे हुए पुष्प वाला।

तुलसी-विवाह की भाँति अश्वत्थ–विवाह की भी परम्परा हिन्दू धर्म में है। इसका अनुष्ठान काफी धूम-धाम से किया जाता है। अश्वत्थ का रोपण भारतवर्ष के सभी भागों में मंदिरों के पास अवश्य देखा गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में संतान की इच्छुक स्त्रियाँ गांव के कएँ के साथ-साथ अश्वत्थ की भी पूजा किया करती है । अश्वत्थ के जड़ पर सिन्दूर

लगाना, प्रदक्षिणा करना, तने को धागे से लपेटना तथा जड़ के पास किसी देवी देवता की मूर्ति रखना ऐसे ही अनेक पूजा के विधान है।

अश्वत्थ का प्रयोग औषधि के रूप में काफी हुआ है। संकामक रोगों के फैलने के समय अश्वत्थ की पूजा का विधान बताया गया है। मुँह के स्वाद के खराब होने, भोजन से अरूचि व पित आदि दोषों के निवारण हेतु अश्वत्थ के फलों का उपयोग किया जाता है। सूश्रुत संहिता में घाव व दूषित रक्त शुद्धि एवं पित के उपचार के लिए अश्वत्थ की औषधिका प्रयोग बताया गया है।

अश्वत्थवृक्षस्य फलानि पक्कायन्तीबहुद्यानि च शीतलानि।

कुर्वान्ति पित्तस्तविषार्तिदाहं विच्छर्दि-शोषारूचि दोषनाशम्।

# भारत की श्रेष्ठतम वनस्पति औषधि ''हरड़''
# (टर्मिनेलिया चेव्युला)

*सुख सागर*
*मध्य क्षेत्र, इलाहाबाद*
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण*

प्रकृति की अनमोल धरोहर ''हरड़'' भारत की श्रेष्टतम वनस्पति औषधियों में गिना जाता है। यह भारत देश के प्रायःसभी क्षेत्रों मुख्यतः 4 हजार फुट तक की ऊँचाई के पर्वतीय भागों, उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, पंजाब, महाराष्ट्र, तमिलनाडू तथा मध्य प्रदेश में पंचमढ़ी एवं बोरी के वनों में भरा पड़ा है।

हरड़ का वृक्ष काफी ऊँचा होता है, इसका तना लम्बा सीधा सख्त एवं भूरे (धूसर) रंग का होता है जिस पर पीताभ हरे रंग के दाग से होते हैं। इसके पत्ते 3 से 8 इन्च लम्बे एवं 1.5 इन्च चौड़े होते हैं। इसके फूल सफेदी लिए हुए लम्बी मंजरियों में होते हैं उनमे कुछ उग्रता लिए हुए गंध आती हैं। हरड़ के पत्ते शीत काल में गिर जाते हैं और गर्मियों के प्रारम्भ में पुष्पागम होता है।

इसके फल पाँच उन्नत शिराओं वाले एवं कठोर तथा एक से दो इंच तक लम्बे होते हैं। एक फल में केवल एक बीज होता हैं । वैसे तो ग्रन्थों में कई प्रकार के हरड़ का वर्णन मिलता है पर केवल तीन प्रकार के हरड़ ही बाजार में उपलबध है।

(१) छोटी हरड़ (हलीलए स्याह)

(२) पीली हरड़ (हलीलए जर्द)

(३) बड़ी हरड़ (हलीलए काबुली)

वास्तव में ये तीनों एक ही वृक्ष के फल हैं जो अवस्था भेद से अलग-अलग हो जाते हैं । हरड़ बृक्ष से जो कच्चे कोमल फल गुठली पडने से पूर्व ही वृक्ष से गिर जाते हैं, ये सूखने पर काले रंग के हो जाते हैं इसलिए इन्हे काली हरड़ कहते हैं। जो हरड़ गूठली पड़ने के बाद पूर्ण पकने से पहले संग्रह कर लिए जाते हैं इन्हे पीली हरड कहते हैं और जो हरड़ वृक्ष पर पूर्ण पक जाने के बाद संग्रह किए जाते हैं उन्हे बड़ी हरड़ कहते हैं। परन्तु छिद्र रहित बड़े बक्काल वाले भारी पुष्ट और 15 मास से अधिक वजन वाले हरड़ चिकित्साकार्य में श्रेष्ट माने जाते हैं।

विविध नाम : संस्कृत–हरीतकी, शिवा, अभया आदि। हिन्दी–हरड़ हर्रे। हर्ट, हड़। फारसी–हलीला। लेटिन–टर्मिनेलिया चेव्यूला।

गुणधर्म :– नमक के अतिरिक्त हरड़ में पाँच तरह के रस पाये जाते हैं। हरड़ रूक्ष, त्रिदोषहर, दीपन, पाचन और मृदुरेचन है। यह रसायन बुद्धिप्रदायक, शक्ति बर्धक एवं आयु बढ़ाने वाला होता है। यह नेत्रों के लिए हितकर तथा वायु का अनुलोमन करता है। यह श्वास, कास, उदर विकार, बवासीर, कृमि, हिचकी, कब्ज, वमन, पीलिया और यकृत, प्लीहा की

विकृतियों को दूर करता है। इसका सेवन हर प्रकार से उपयोगी है, इसे भोजन से पहले या बाद में लिया जा सकता है किसी भी स्थित में हानि नही पहुंचाता । इसलिए हरड़ को माता के समान ही भलाई करने वाला माना गया है। संस्कृत में कहा भी गया है। ''यस्य माता गृहे नास्ति तथ्य माता हरीतको। कदाचिद् कुप्यते माता नोदरस्था हरीतकी।।

अर्थात् हरड़ मनुष्य के लिए माता की तरह सुखकारी है, हो सकता है माता कभी क्रोध में भी आ जाय लेकिन खाई हुई हरड़ हमेशा भलाई ही करती है।

आधुनिक चिकित्सकों ने हरड़ को परम उपयोगी बताया है, रसायनिक संगठन की दृष्टि से इसमें टैनिक ऐसिड 20 से 45% तक पाया जाता है, इसके अतिरिक्त इसमें गैलिक एसिड पीला भूरा रंजक पदार्थ, चेबुलिनिक सिड और राल आदि तत्व प्राप्त होते हैं।

सेवनीय मात्रा : छोटी हरड़ 1.5 ग्राम से 3 ग्राम तक घी मे भून कर बनाया गया चूर्ण।

बड़ी हरड़ चूर्ण–विरचन के लिए – 3 से 6 ग्राम एवं रसायन हेतु 1.5 ग्राम से 3 ग्राम तक। ऋतु के अनुसार हरड़ सेवन विधि :

ग्रीष्म ऋतु में गुड़ के साथ एवं वर्षा ऋतु में सेधवा नमक मिलाकर तथा शरद ऋतु में मिश्री मिलाकर प्रयोग करना चहिए । हरड़ शरीर की समस्त कियाओं को सुधारता है एवं स्वाभाविक बनाता है ।

हरड़ की क्रिया बिशेषता :–

हरड़ सेवन करने पर पहले वह मल शोधन करता है इससे जठराग्नि प्रदीप्त होकर पेट यंत्रों का कार्य सुदृढ़ हो जाता है, भूख बढ़ जाती है और व्यक्ति स्वस्थ महसूस करने लगता है, शरीर के सभी छोटे बड़े अंग प्रत्यगोंकी कमजोरी समाप्त होकर मनुष्य चैतन्य बना रहता है तथा इसके सेवन से सप्त धातुएं भी शुद्ध होकर पुष्ट हो जाती है।

विविध प्रयोग तथा उपयोग :–

(१) उदर विकार में :

हरड़ को रात में मट्टे मे भिगों दे और सुबह निकाल कर धुप में सुखा ले । दिन भर सूखने के बाद में फिर भिगों दें और सुबह निकाल कर सुखा ले इस प्रकार 21 दिन तक भिगों कर सुखाएं, अब यह अमृता रसायन तैयार है। इसको प्रतिदिन सुबह एक हरड़ छिलका उतार कर 4 से 6 ग्राम तक खा ले, इस रसायन से पेट साफ होता है तथा पेट भारी, रहना गैस बनना, भूख कम लगना, पेट में मीठा-मीठा दर्द रहना, अजीर्ण, याकृत दुर्बलता, खूनी व वादी बवासीर आदि में लाभ मिलता है। जो लोग पाचन विकारों से ग्रस्त रहते हैं उनके लिए यह रसायन बहुत उपयोगी है।

२. अतिसार ( पेचिस-ऑव )

छोटी हरड़, सौफ और सोठ को बराबर लेकर देशी घी में भून लेवे ध्यान रहे जलने न पाये अब इसे कूट छान कर चूर्ण बना लें, चूर्ण के बराबर मिश्री पीस कर मिला दें अब इसे 1.5 ग्राम से 3 ग्राम तक

ताजे जल से दिन में 3 बार खॉये यह ऑव - पेचिस में शीघ्र लाभ देता है, तथा ऑतों की क्रिया को ठीक करता है।

3. बच्चो के रोग -

छोटी हरड़ साफ पत्थर पर घिस कर चाय के आधा चम्मच भर उतार लें उसमें एक चावल के बराबर काला नमक डाल कर गुनगुने जल में मिला कर बच्चे को दिन में एक बार दें। यह शिशुओं के पेट के कई रोगों में लाभ करता है जैसे बच्चों को कई दिन तक पाखाना न होना, चिड़चिड़ा पन, तथा उदर शूल आदि। शिशु को सप्ताह में एक बार पिला देने से उनकी पाचन क्रिया ठीक रहती है।

4. कब्ज और गैष्टिक रोगों में :

छोटी हरड़ को साफ पानी में धो कर पीस लें और इसे साफ बर्तन में कपड़े से ढक कर रख दें, एक-एक हरड़ दिन में तीन बार सुपारी की तरह खा लें, यह कब्ज और गैष्टिक रोगों के लिए सर्वोत्तम और सस्ती दवा है।

हरड़ का मुरब्बा

बड़ी वाली हरड़ जल मे भिगों दें, तीन दिन के बाद इसे निकाल कर ठीक प्रकार से उबाल लें जब नर्म हो जाय तो उतार लें और इसे काटे से गोद कर सुखा लें, सूख जाने पर चार गुने चीनी के शीर में डाल कर पकाये। गाढ़ा हो जाने पर उतार लें और किसी साफ बर्तन में रख लें, एक सप्ताह बाद यह खाने योग्य हो जाता है। अब इसे प्रातः एक हरड़ खायें इससे दिल, दिमाग, याकृत और आमाशय आदि को बल मिलता है, पाचन ठीक रहता है। सर के लिए भी लाभदायक है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि यह वनस्पति कितनी उपयोगी है। आज आवश्यकता इस बात की है कि इसे संचार माध्यमों के द्वारा बड़े पैमाने पर संग्रहण एवं प्रयोग विधि जन मानस में पहुंचाया जाय जिससे इस प्राकृतिक सम्पदा का दोहन एवं उपयोग बड़े पैमाने पर किया जा सके।

# ''परमारथ के कारणे वृक्षन धरा शरीर''

*रेशमा माथुर*
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून*

वृक्ष की महत्ता के विषय में इससे अधिक और क्या कहा जा सकता है कि ''अनेक धर्म व अर्थहीन पुत्रों से उत्तम तो रास्ते का वो एक वृक्ष है जिसकी छाँव में पथिक विश्राम पाते है।''

अग्नि पुराण के अनुसार ''जो मनुष्य वृक्षरोपण का पुनीत कार्य करता है वह तीन सहस्त्र वर्षो तक पितरों का उद्धार करता है, तथा जितने वर्षो तक वृक्ष फलों से प्रणियों को लाभान्वित करते हैं वह व्यक्ति उतने ही वर्षो स्वर्ग-सुख भोगता है।

थोड़ी देर के लिये हम स्वर्ग-सुख की बात न भी करें तो पृथ्वी पर वृक्षों द्वारा पाये जाने वाले सुख को भुलाया नही जा सकता।

यह तो सर्वविदित है कि वृक्ष वातावरण से कार्बन-डाई-अक्साईड ($Co_2$) को ग्रहण करते हैं और आक्सीजन ($O_2$) छोड़ते हैं, जो प्राणियों के लिये जीवनदायी है। वृक्षों की लगभग 100 जातियों पर शोध से ज्ञात हुआ है कि पीपल फाईक्स रेलिजिओसा का वृक्ष अन्य वृक्षों की अपेक्षा अधिक मात्रा में आक्सीजन प्रदान करता है। ऐसा अनुमान है कि इसका एक वृक्ष 4 सदस्यों की आक्सीजन की आवश्यकता पूरी कर सकता है। शायद इसी कारण पीपल को इतना सम्मान दिया जाता है।

आज जब पर्यावरण इतना अधिक प्रदूषित हो गया है, तो मनुष्य मात्र का उनके प्रति जागरूक होना आवश्यक हो गया है। इस प्रदूषण ने पर्यावरण के शुद्धिकरण हेतु वृक्षों के महत्व को और भी उजागर कर दिया है तथा प्रदूषण निवारण के लिये वृक्षारोपण अभियान सम्पूर्ण विश्व में चलाये जा रहे हैं जो कि पर्यावरण के शुद्धिकरण के उपायों में से एक हैं।

वृक्षों की विभिन्न जातियों पर अब तक किये गये शोध के अनुसार पर्यावरण में प्रदूषण को रोकने वाले वृक्षों को निम्न वर्गो में बांटा जा सकता है।

१. प्रदूषण को सहन कर सकने वाले वृक्ष :

इस वर्ग के वृक्ष व पौधे वातावरणीय एवं मृदा प्रदूषण को सहन कर सकते हैं परन्तु एक निश्चित सीमा तक ही। कल-कारखानों से निकलने वाली विषैली गैसं पर्यावरणीय प्रदूषण का कारण बनती है, इनमें मुख्यतः कार्बनडाइआक्साइड, सल्फर डाइ आक्साइड, हेवीमेटल व हाईड्रोजन पलोराइड तथा कार्बन मोनोआक्साइड, हैं (वेक्लाचालिन 1985, स्मिथ 1981)।

वृक्ष इन वायु-प्रदूषकों का शोषण कर उन्हे निष्क्रिय कर देते हैं। ऐसा अनुमान है कि अपनी छाल, बिरोजा, (रेजिन) आदि के माध्यम से गैसों से

उत्पन्न प्रदूषण को 40 प्रतिशत से 50 प्रतिशत तक कम कर सकने की क्षमता वृक्ष रखते हैं। पुत्रन्जिवा, पेल्टोफोरम आदि वृक्षों की जातियां 70 प्रतिशत तक प्रदूषण रोकने में सहायक पायी गयी हैं। इनके अतिरिक्त सदाबहार एवं पर्णपाती वृक्ष की निम्न जातियां प्रदूषण सहन करने की सामर्थ्य रखती हैं। ''फाईकस रेलिजिओसा, फा० ग्लोमेराटा, फा० इन्फेकटोरिया, कैन्सिआ फिस्टुला, आलवीजिआ लैबेक, पोलीएल्थिआ लोंगीफोलिआ, ल्यूकिना ल्युकोसेफाला, मैन्गीफेरा इन्डिका, अनोना स्कबामोसा, सीजीजियम क्युमिनाइ, अल्सटोनिआ स्कोलारिस, एन्थोसिफालस, चाइनेन्सिस अजाडीराक्टा इंडिका, इगल मार्मेलोस, एम्बुलिका आफिसिनालिस आदि।''

२. प्रदूषण-सूचक वृक्ष एवं पौधे :

वृक्षो की कुछ जातियां तो 4 प्रतिशत भी वातावरणीय या मृदा प्रदूषण को सहन नही कर पाती है। अतः उनमे प्रदूषण के साथ साथ कुछ भौतिक परिवर्तन होने लगते हैं, जैसेः– बढ़त रूक जाना, पत्तियों के किनारे सूखना, रंगहीनता तथा भूरे रंग का हो जाना, असमय पीलापन आ जाना, फूलों का न आना तथा अच्छे बीजों का न बनना आदि। उदाहरणार्थ : अबेल्मास्कस प्रस्कुलेन्टस, अमारान्थस विरीडिस, ग्लाइसीन मैक्स, हेलिआन्थस अन्नुस, मेडिकागो सेटाइवा, स्पाईनसिआ ओलारेसिआ, एडीना कॉर्डीफोलिआ, ब्यूटिया मानास्पर्मा, बुकनानिआ लैन्जन, आदि वातावरण में सल्फर डाईआक्साइड की उपस्थिति के सूचक हैं। इसके अतिरिक्त साधारण तया पायी जाने वाली ''दूब'' घास साईनोडान डैक्टीलोन वातावरणीय पलोराईड की सूचक है।

३. वायु शोधक वृक्ष / पौधे :

वायु शोधक वृक्ष/पौध साधारणतया सुगन्ध युक्त होते हैं तथा अपनी सुगन्ध से प्रदूषित वातावरण को सुगन्धमय बना देते है। इनमें चमेली (जेस्मीनम जाति) रात की रानी (सेस्ट्रम नॉक्ट्रनम) रजनीगंधा (पोलीएन्थस टयूबरोसा), गेंदा (टैगेटस पैटुला) तुलसी (आसिमम सैक्टम) आम (मेंगीफेरा इन्डिका), मौलसरी (माईमुसोप्स एलिनजाई), हरसिंगार (निक्टैन्थस आरबोरट्रिस्टिस) मुख्य हैं। शोधों के द्वारा यह जात हुआ है कि क्ई सद्राबहार वृक्ष वातावरण में उपस्थित धूल कणों को अपनी खुरदरी एवं रोयेंदार छाल के द्वारा शोषित करके वातावरण को दूषित होने से बचाते हैं।

आम के वृक्ष की महत्ता पौराणिक ग्रंथों में पाई जाती है। आम के पत्तों को शुभ माना जाता है तथा मंदिरों, पूजा स्थानों तथा कथा आदि में कलश में भी पत्तों को सजाया जाता है, जिसका एक वैज्ञानिक कारण है। वैज्ञानिक निकल्सन (1959) के शोध के आधार पर यह ज्ञात हुआ है कि आम के पत्तों में जीवाणुनाशक गंध निकलती है जो कि वातावरण को शूद्ध व महामारी जैसे रोगों को रोकने की क्षमता रखती है।

इसके अतिरिक्त फाईकस-ग्लोमेराटा, अशोक (पौलीएल्थिआ) तथा क्ई सदाबहार वृक्ष जैसे कि मोरपंखी (थूजा ओंक्सीडेन्टलिस), पलास (ष्यटियामो नोस्पर्मा), सेमल (बॉम्बेक्स) की जातियां तथा ''फाईकस'' की जातियां आदि अपने घने पत्तों के द्वारा एक छत्र सा बना कर वातावरण की धूल को शोषित करने में सहायक होते है।

वातावरण को शीतल करने वाले पौधे :

पर्यावरण शोधक वृक्षों तथा पौ में कुछ ऐसे भी हैं जिनमें वातावरण को शीतल करने की प्राकृतिक क्षमता पायी जाती है। जैसे कदम्ब (एन्थोसिफैलस कदम्बा), गुलमोहर (डिलोनिक्स रिजिया), अमलतास (कैसिस्या फिस्टुला) के संबंध में प्रचलित है कि इनकी पत्तियों के द्वारा जल की कुछ मात्रा भाप के रूप में निकलकर वातावरण को शीतलता प्रदान करती है।

अतः वातावरण की शुद्धि के लिये वृक्षारोपण अभियान तीव्र से तीव्रकर कर लिया जाना चाहिए।

# लेग्युम्स : मृदा, पशु व मानव के पालन-पोषण की दृष्टि में

*पी. वी. श्रीकुमार व मोहम्मद शरीफ*
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण*
*पोर्ट ब्लेयर*

लेग्युम्स लेगुमिनोसी से सम्बन्धित पादप समूह है। 650 जेनेरा में 18000 जातियों वाला यह विश्व का तीसरा वृहत्तम पुष्प पादप कुल है। लेगुमिनोसी कुल ''पोड'' कुल के नाम से जाना जाता है। इस कुल के पौधे मिट्टी में वातावरणीय नाइट्रोजन नियोजित कर उर्वरता बढ़ाते हैं। इस समूह के पौधे प्राकृतिक सौन्दर्य व वृहत आर्थिक उपयोग के काम आते है। इसका नाम अवश्य ही फलों के एक कोषी ''पोड'' (लेग्युम) से सृजित हुआ होगा। जो एक कलइ नुमा मझोले आकार के नाल से विकसित होताहै। यह विविधतापूर्ण पादप समूह मृदा को उर्वर करने तथा पशु व मानव के खाद्य के रूप में काम आता है। इसमें अनेक पौध जातियां सम्मिलित है, जो मानवजाति की मुख्य आवश्यकताओं को पूरा करती है। जैसे खाद्य, आश्रय एवं कपड़ों को रंगने के लिए रंग। लेग्युम्स हमें चारा, तेल, गोंद व रोगन दे सकता है। इसके अतिरिक्त मृदा को उर्वर बनाने के लिए नाइट्रोजन को नियोजित करता है। यह पादप कुल प्रोटिन का अच्छा स्त्रोत होने के साथ-साथ यह हमें ईंधन, लकड़ी, मदिरा, खट्टे फल (इमली) व औषधि इत्यादि भी देता है ।

इलडिस :– भारत में विभिन्न प्रकार के 1200 लेग्युम्स की जातियां प्रायः सभी पारिस्थिकीय क्षेत्रों में पाई जाती है। उष्ण व उपोष्ण कटिबन्धों में इस पादप समूह की वृहत्तम विविधता और मानव कल्याण में आर्थिक महत्व असाधारण है। इन तथ्यों का ख्याल कर रॉयल बोटेनिक गार्डन, किऊ ब्रिटेन ने अन्तर्राष्ट्रीय लेग्युम व सूचना सेवा प्रारम्भ की है। इस योजना का उद्देश्य विश्व के लेग्युम संसाधन का न्याय संगत दोहन से बढ़ती जनसंख्या व उनके घरेलू पशु को खादय, चारा औषधि इत्यादि देना है। हांलाकि विश्व में लेग्युम की 18000 जातियां है किन्तु अब तक हम लोग केवल इसके 25 प्रतिशत को ही काम में ला पाएं है। इस पादप कुल में कुछ पौध शोभा बढ़ाने वाले जबकि अन्य पर्यावरणीय उपयोग में काम आने वाले है। एन. बी. आर. आइ. लखनऊ के डा. पी. पुष्पगन्धन ने भारत में भी इसी प्रकार का अद्यतन डाटाबेस विकसित किया है।

वनस्पति प्रोटिन :– भारत में लेग्युम संसाधन की प्रचुरता व विविधता है। हमारी जनसंख्या का अधिकांश विशेषकर गरीब श्रेणी के लोगों में प्रोटिन की कमी पाई जाती है। इसका वास्तविक कारण जागरूकता की कमी है। तथ्य की बात यह है कि लेग्युम मानव और पशु दोनों को ही दालें, मटर, बिन्स, चने इत्यादि क माध्यम से प्रोटिन आपूर्ति करता है। श्रीमती मेनका

गांधी को इस बात के लिए धन्यवाद कि उन्होंने अभियान के जरिये मांसाहारियों को शाकाहारी (प्रोटिन) में परिवर्तित किया।

माल्टिविटामिन व बेटाकैरोटेन :–कुछेक लेग्युम की पत्तियां, फूल फलियां पोषक तत्व, विटामिन ''ए'' विटामिन ''बी'' व बैटाकैरेटेन से भरपूर है। विगत दिनों में आम अगधो पौध (सेसबेनियां ग्रान्डीफलोरा) जिसे हिन्दी भाषा ''बसना कहा जाता है केवल एक चारा था। इसके पत्ते और फलियां सहजन/मोरिंगाकी फली की तरह दिखते थे । बड़े बड़े माखन जैसे श्वेत या हल्के गुलाबी फूल मानो कोमल डालियों से झूलकर कुछ पक्षियों की नकल करते हों। श्रीमती पूनम देशवीर सिंह का कहना है पत्तियों द्वारा बनी दक्षिणी भारतीय भोजन ''सजना'' के स्वाद को मात कर जाती है। वे विवेकानन्द केन्द्रीय विद्यालय की विज्ञान की अध्यापिका व प्रकृति प्रेमी है । इसके फूल से पकौड़े बहुत अच्छे बनते है। स्थानीय आर. एम. आर. सी. वैज्ञानिक व सामाजिक वानिकी प्रभाग द्वारा सृजित इस पौध के प्रति जागरूकता ने शाक विक्रेत्ताओं के बीच प्रतियोगिता पैदा कर दी है। एकेसिया सिनुटा (टिटा/कोची) अन्य पौध जातियां है जिसके पत्ते, फूल व नरम फली भोजन में काम आने के साथ-साथ पोषक गुण भी है।

चारा व हरी खाद :– काफी संख्या में लेग्युम चारा व हरी खाद के काम में लाया जाता है। विश्व मे विशेषकर उष्ण क्षेत्रों में मनुष्य और घरेलू पशुओं की उच्च जन्म दर के कारण परम्परागत लेग्युम मनुष्यों की प्रोटीन आवश्यकताओं को पूरा नही कर सकती और यही दशा पोधों और घरेलू पशुओंको हरी खाद के उपलब्धता के मामलें में भी हों सकती है। हाल ही में अन्दमान निकोबार द्वीप के सूदूर क्षेत्र नॉन कोरी घास पर किए गए गवेषणा में क्ई नई लेग्युम की खोज की गई जिन्हें वाणिज्यिक रूप मे काम में लाया जा सकता है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षणं के श्री मार्शाल टिग्गा जो एक प्रकृति प्रेमी, परिश्रमी व स्कॉलर है व अपने सेवा निवृत के अति निकट होने के उपरान्त दो नये लेग्युम खोज डाले जिसे अन्दमान के गैर-स्वदेशी वनस्पतिजात में जोड़ डाला गया। यह आशा की जाती है कि बी.एस.आइ. सी. ए. आर., ए. एचवीएस व वन विभाग के सहयोग से इन द्वीपों के संभावित चारा और हरी खाद के संसाधन के मूल्याकंन हेतु एक बहुविषयी योजना प्रारम्भ की जा सकती है।

लेग्युम औषधिं के रूप में :– मानव को स्वस्थ व सम्पन्न बनाए रखने के लिए आयुर्वेदिक (हर्बल) औषधि व प्राकृतिक चिकित्सा परम्परागत उपाय हैं। क्ई लोगों के कथानुसार अमलताश (केसिया फिसटुला) जैसे सुनहरे छटा वाले वृक्ष से 30 से अधिक रोगों का उपचार हो सकता है। अस्थमा, केन्सर, पीलिया, सर्पदंश व कुछ रोग का भी उपचार किया जा सकता है। दाद व एगज़िमा के लिए सी अलाटा व सी टोरा। हड्डी टुटने, दुग्धबर्धक (लेक्टेशन) सर्पदंश इत्यादि के लिए ऑकिडेनटालिस (कासुन्दी) बवासीर के लिए सी सोपेरा (कासून्दा)। डा. आर. बी. राई जो एक कर्मठ कर्मी व वैज्ञानिक है उनके अनुसार केन्डल स्टिक प्लान्ट केसिया अलाटा के पत्तों से पशुओं के कुबड़ रोग को प्रभावी ढंग से उपचार किया जा सकता है।

चूहा प्रतिरोधक :– किसान प्रायः अपने बगीचों और खेतों में लिन्हा बाली (गेरूल) ग्लिरीसिडिया सेपियम का बाड़ लगाना पसन्द करते है। क्योंकि इस्के सुन्दर फ्ल और पत्ते दूर से गुलाबमाला की भांति नजर जाते है। यह सच भी हो सकता और नहीं भी फिर भी दक्षिणी अफिका के इन्टीग्रेटेड पेस्ट

मैनेजमेंट (आइ. पी. एम) ने दावा किया है कि इस झाड़ी के चूर्ण चूहा प्रतिरोधक का काम करते है। लेखक ने इस विषय को अब किसान और कृषि वैज्ञानिकों पर छोड़ दिया है कि उपरोक्त पत्ते का चूहा प्रतिरोधक के रूप में प्रयोग करें जिससे परिणाम मालूम हो सके।

विभूषक लेग्युम्स : बहुतसे लेग्युम्स अलंकार के रूप में काम आते है जैसे बाहुनिया, कासियास, पाफबॉल्स, कॉपर पॉड, गुलमोहर इत्यादि। थाइलैण्ड की राजकुमारी श्रीमती महाचकरी सिरीधोन एमहार्स्टिया नॉबिलिस की माला देखकर बहुत खुश हुई। पुष्पी पौधों की रानी या स्वर्ग विटप जैसा है। सिप्पीघाट फार्म में जब राजकुमारी के गाल फूलों की अपूर्व सुन्दरता से मग्ध होकर गुलाबी हो उठें, पर्यटन कार्यकर्ता डा. बी. एस. बनर्जी एवं उनकी टीम ने इस दृश्य का फिल्मांकन कर लिया।

इमारती लकड़ी के रूप में लेग्युम :–पेडॅक (टेरोकार्पस डलबर्जिवाइडिस) (दलबर्जिया लेटीफोलिया) जो लेग्युम के सर्वोत्तम इमारती लकड़ी के रूप में जाने जाते है। इसके अलावा इस कुल में वाणिज्यिक महत्व के अनेक वृक्षों की जातियां है जैसे अलबिजिया स्टीपुलाटा (कोको) अलबिजिया प्रोकेरा, एडनेथेरा पावोनिआ (टवेगेल) साइनामेट्रा रामीफलोरा एफजिलिया बिनुगा। इसके अतिरिक्त पोनगामिया पिन्नाटा (कारन्ज) जिसके बीज से पोंगम नामक प्रसिद्ध तेल निकलता है।

चाय व काफी :– कासिया ऑरिकुलाटा (तरवार) के शुष्क फूल एक सुन्दर झाड़ी का काम तो करते ही है ये काफी पेय का विकल्प है और इसीके शुष्क पत्ते चाय के रूप में उपयोग में आते है। इसी जिन्स की अन्य कसोदी व इसी जाति के काटेलेरिया पोलिदा (सेन) वाइल्ड इन्डिगो ( थमासिया) सनहेम्प इत्यादि कॉफी के अल्प ज्ञात विकल्प है।

तैरने वाले / संतरण :– आजकल जरवा जाति मीलों दूर अपने गन्तव्य स्थल तक पहुँचने के लिए थरमोकोल नाव को उपयोग में लाते है। कल्पना करें कि उसकी आनेवाली पीढ़ी का एक बच्चा कालापानी में तैरना सीखने के लिए जल में कूद पड़ता है जिसके बाएं हाथ के खपची में लिखा होता है ''प्लास्टिक नहीं'' यह पर्यावरण के लिए हानिकारक है। दांये हाथ में सोला का खपची होगा (एसचानोगेन अस्पेरा) यह स्वामी विवेकानन्द जी की उस घटना की याद दिलाती है। जब वे फटे कपड़ो में बिना किसी पैसे के कन्याकुमारी तक तैर गए थे।

निसन्देह, विदाई सभी के लिए अश्रुपूर्ण हृदय द्रावक थी पर जब इस द्वीप समूह पहुँचे तो मौलिक व विशुद्ध प्रकृति की सुन्दरता सुन्दर पेड़ पौधे इत्यादि सुखद अपने जो (उन्होने दस बर्ष पहले सोच रखे थे। सपने वास्तविकता में परिवर्तित हुएऔर हम अपने कीर्ति पर सन्तुष्ट हुए। हम अपने इन द्वीपों की सौन्दर्य को कृतज्ञता से स्मरण करेगे और हमनें इन द्वीपों के लिए थोड़ा बहुत जो किया उसे यहां के द्वीपवासी भूल नहीं सकते। जब जहाज में बैठते है तो ऐसा लगता है कि हम अपने रिश्ते-नातों से दूर जा रहे है। लेखक को सभी की भांति ''सोला पित'' पर तैरना पसन्द होगा और अन्त में रोज आइलैण्ड को अलविदा कहते हुए लेग्युम चाय व लेग्युम काफी की चुस्की लेते हुए अपने कदमों की मीठी यादों को छोड़ते है। क्या हमें अभी भी सेलुलर जेल से मि. डेविड बैरी की गर्जना सुनाई देती है ? नहीं, बिल्कुल नहीं ।

# पर्यावरण, प्रदूषण और हम

*रुपाली प्रशांत कुलकर्णी*
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण,*
*पश्चिमी परिमंडल,पुणे*

समस्त मानव जाति, प्राणि एवं पौधो के अस्तित्व बनाये रखने हेतु पर्यावरण के तीनों घटक (जल वायु एवं मृदा) का विशुद्ध होना अत्यंत आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है। पिछले तीन दशकसे पर्यावरण के बारेमें जागरूकता का आभास सभी जनमानस में विकसित हो गया है। प्रदूषित पर्यावरण की वजह से क्या हमें श्वसन हेतु स्वच्छ हवा, पीने के लिये शुद्ध जल एवं कृषि के लिये पर्याप्त उपजाऊ भूमिउपलब्ध हैं? पूरीतरह से उत्तर मिलता है ''नही''। पर्यावरण के सभी घटकों को दूषित करने वाले अनेक कारक हैं जो हमारे देश के सामने महत्वपूर्ण गंभीर समस्या है।

1972 में जो अन्तराष्ट्रीय सम्मेलन हो गया था उसका प्रमुख विषय था ''मानव और पर्यावरण''। उस वक्त प्रधान मंत्री इंदिरागांधी ने उसमें भाग लिया था और इस विषय में बड़ी चिन्ता व्यक्त करके उन्होनें कहा था कि ''गरीबी यह एक प्रकारका बडा प्रदूषण है जो हमारे देश में दिन ब दिन उभरता जा रहा है।

आज इस विषय के बारेमें सोचते समय सबसे पहले यह बात ध्यान में लेना चाहिये कि हमारा पर्यावरण उसके मूल स्वरूप में है या नही और ऐसी कौनसी बात है जो हमारे पर्यावरण को असन्तुलित बना रही है । इन समस्याओं को कम करने के लिये पौधों के योगदान के संबध में प्रकाश डालने का प्रस्तुत लेख में प्रयास किया गया है।

पर्यावरण प्रदूषण के प्रमुख कारण :

पुरातन कालसे मनुष्य अत्यंत सादा जीवन जी रहा था उसकी जरूरतें अत्यंत मर्यादित थी । लेकिन बीसवी शताब्दीसे औदयोगिकरण एवं वैज्ञानिक कांति के कारण मानव के विकास के साथ पर्यावरण प्रदूषण, आरोग्य नाशक समस्या निर्माण हो गई। मानव ने अपने खुदके स्वार्थ के लिये बहुत सालोंसे निसर्ग की, पर्यावरण, रासायनिक, भौतिक अण्विक शोषण करके पर्यावरण को उलटा पुलटा किया है। प्राचीन काल में भारत वर्ष अपनी प्राकृतिक एवं खनिज संपदा में समृद्ध होने के कारण ''स्वर्ण भूमि व सोनेकी चिडिया'' कहलाता था। इस महान देश की अवनति मुख्यतः बढती हुई आबादी के कारण लोगों के पुनर्वास हेतु प्राकृतिक वनों की कटाई के कारण हुई। जिसके फल स्वरूप कई महत्वपूर्ण पौधों के नैसर्गिक निवास स्थान नष्ट होने से वे संकट ग्रस्त हो गये। जैसे– जटा मांसी (नार्डो-स्टाकिस) एवं नयन मनोहर विविध आर्किड की जातिंया, सर्पगंधा, गुग्गल, आदि । उसी तरह औदयोगिकरण, जंगलतोड, पेट्रोल डिजेल का अधाधुंध उपयोग प्लॅसिटक उपयोग,

ध्वनिप्रदूषण और बहुत क्षेत्र में रसायनों का उपयोग पशुओं के चारे के लिये अत्याधिक मात्रों में पौधोंकी कटाई, वनों को काटकर रास्ता बनाना एवं भवनो का निर्माण आदि मुख्य है। जिसके फलस्वरूप हुई पौधों की कमी व नाश के कारण पर्यावरण का विनाश तथा प्रदूषण हुआ है। इससे बडा ही विद्रूप स्वरूप आ रहा है।

विविध : प्रदूषण एवं उसका कुप्रभाव–

वायु प्रदूषण :– पृथ्वी उपर के सब जीवजंतु पशुपक्षी, वनस्पति सबके लिये शुध्द हवाकी जरूरत होती है। बड़े बड़े शहरो में विभिन्न कारखानों की चिमनियों से निकले हुई धुएं वाहनो एवं विविध प्रकार के ईन्धन के कारण उत्पन्न जहरीले धुँए, से वायु प्रदूषण होता है। आज जगमें बडे बडे शहरावासी प्रदूषण के कारण त्रस्त हो गये हैं। गतवर्ष ही विश्व आरोग्य संस्था (WHO)के घोषित किये हुए भारत के प्रदूषित महानगरोमें अकेले बम्वई में ही हर दिन रास्तोंपर 8,40,000 वाहन दौडते है, 19,000 वाहन बाहर से आते है और 500 नये वाहन पंजीकृत होते हैं। जिसके फलस्वरूप करीब 5,500 टन से भी अधिक तकरीबन 60 प्रतिशत वायु प्रदूषण बम्वई में केवल वाहनो के कारण है। दिल्ली और कलकात्ता को सबसे अधिक वायु प्रदूषित क्षेत्र घोषित किया गया है और उसी वजहसे हाल ही में सुप्रीमकोर्ट ने मॉग की थी कि 1,50,000 कारखानो को अन्यत्र ले जाय और प्रदूषण फैलने वाले वहनों पर अंकुश लगाने के लिये ठोस कदम उठाया जायें। वाहनें, कारखाने आदि के धुए से विषैले पदार्थ जैसे सल्फर डाई ऑक्साइड, नायट्रोजन ओक्साइड कार्बन मोनोक्साइड आदि पैदा होते जो हमारे प्राणवायु को प्रदूषित करके स्वास-रोगों एवं गले का विकार, दमा-ॲलर्जी, आँखों का विकार गर्भाशय के उपर दुषपरिणाम तथा कैंसर जैसे असाध्य बीमारियॉ फैलाते है। दूषित हवा का परिणाम मानव के साथ पौधों के उपर भी होता है । पत्तो का पीलापन, समय के पहले उनका झड़ना आदि दूषित हवा का कुप्रभाव। आज सूर्य की पहली किरण भी ''धरती'' पर आते प्रदूषित हो जाती है। उसके कारण हमारा ''हरितगृह प्रभाव'' असन्तुलित होरहा है। इस बढते औदयोगीकरण के कारण फैलते प्रदूषण की रोकथाम के लिए अब यह आवश्यक हो गया है कि हम ऐसी चीजों का उपयोग करें जो पर्यावरण को फिर से प्रदूषित न करें और ''मिटटी की चीजें मिटटी में समाजाएं'' इस कहावत को चरितार्थ करें।

जल प्रदूषण :– मृतशरीर, कूडे-करकट एवं विविध विषाक्त रसायनों को नदी-नालों मे बहने से जल प्रदूषित होता है। जिसके फलस्वरूप कोलेरा, पीलिया जैसी महाबीमारियों का आगमन दूषित जल पीने से होता है।

एक सर्वेक्षण अनुसार दूषित जल के उपयोग से फैलनेवाले रोग केवल अतिसार और पेचिश से ही सम्पूर्ण विश्वमें करीब 40 लाख बच्चे प्रतिवर्ष प्रभावित होते हैं। जल जीवन एवं जल सम्बन्धित रोगों से सारी दुनिया के लगभग 50 करोड लोग प्रतिवर्ष प्रभावित होते हैं। जिनमें से करीब एक करोड अपनी जान गॅवा बैठते हैं। बात यह है कि आज विश्व की अधिकतर नदियां तथा जल, झीलें, तालाब, कुएं आदि प्रदूषित हो जुके है जिसके मुख्य कारण हैं दूषित तेल व रसायनों को नदी व सागर में बहना

तथा जलशयों के किनारों पर बसे घनी आवादी वाले महानगर, नगर और शहर तथा इन महानगरों, नगर और शहरों में औद्योगिकरण का निरन्तर विस्तार एवं बड़ाही महाभयकंर रूप लेती महानगर, नगर और शहर की आबादी।

कीटनाशी रसायनों के अनुचित प्रयोग से प्रतिवर्ष लाखों मनुष्य, जानवरों, पक्षियों तथा जलजीवों पर घातक परिणाम पड रहा है। जैसे इरान-इराक के युध्द के दौरान सागर स्थित तेल के कुओं में लगी आग से अनेक सामुद्रिक प्राणिओं का नाश हुआ। टाटा केमीकल वर्कस द्वारा दूषित तेल के बहाव से सामुद्रिक राष्ट्रीय उद्यान में क्ई वायुशिफ पौधों का भी विनाश हुआ जो अभी भी जारी है । दवाओं के प्रयोग कारण लगभग 10 लाख लोग प्रभावित होते हैं, जिनमें 15000 लोगों की मृत्यु हो जाती है। इतने लोग कीटनाशी दवाओं के कारण समय से पूर्व बूढ़े होते है और कैंसर जैसे भयंकर बीमारीयों के शिकार हो जाते हैं, कीटनाशी दवाओं के प्रयोग के चलते होने वाली दुर्घटनाओं की सूची में भारत का विश्व में तीसरा स्थान है। मनुष्य ने अपनी सुख-सुंविधाओं का जहां इतना अधिक विकास किया है, वहां प्रदूषण की समस्या भी दिनबदिन जटिल हुई है। दिनबदिन बढते हुए कारखानों, मोटरों वाहनो, कीटनाशी दवाओं के अन्धाधुन्ध प्रयोग से, कूडे-करकट और मलमूत्र के दोषपूर्ण जमाव से, वृक्षों की अत्याधिक कटाई से हमारा पर्यावरण लगातार प्रदूषित होता जा रहा है अर्थात हमारे पर्यावरण के मुख्य घटक जल, वायू और भूमि ( मिटटी ) अधिकाधिक प्रदूषित होते जा रहे हैं। ''स्प्रिंकलर सिंचाई'' पध्दति से उपलब्ध जल का योग्य तरीक से ''एक्वाकल्चर'' माध्यम का उपयोग करना, आदि में कुड़े-करकट डालना, धूलाई, मानव-शरीर को बहना आदि पर प्रतिबंध करना चाहिये। गंगा-यमुना जैसे पवित्र नदियां भी गंदी हो जा रही है उसके शुध्दीकरण की योजना भी बनाई गई है जल इतना पवित्र है उसे अपवित्र नहीं करना चाहिये।

भूमि प्रदूषण :– हमें अन्न और जल प्रदान करनेवाली भूमि अर्थात मृदा भी नाना प्रकार के विषैले रसायनों कीट -नाशक औषधों के कु-प्रभाव से दूषित हो गई हैं। और इन सबका परिणाम यह होता है कि प्रदूषित भूमिमें उत्पन्न हुए फल, अनाज एवं भाजी-पालों को खाने से उन जहरीले रसायनों का शरीर में प्रवेश होने से विविध रोगों का प्रदुर्भाव होता है। भूमि प्रदूषण की रोकथाम हेतु प्रकृतिका संतुलन बनाने के लिये रासायनिक एवं सिंचाई पद्धति का उपयोग करना चाहिये, कमसे कम रसायनों का प्रयोग करना चाहिये । रसायनों का ज्यादा उपयोग करने से, फूल-फल, अनाज, भाजी-पालों का मूलरूप हरितद्रव्य खतम हो जाता है। इसलिये हमारी भूमाता को बचाना चाहिये। मृदा व भूमि मे ज्यादा से ज्यादा औषधपयोगी पैड-पौधे लगाना चाहिये जैसे– तुलसी, नीम, पीपल, वट, उम्बर, घर, मंदिर बगीचे एवं सडकों के किनारे लगाना चाहिये। जिससे न केवल पर्यावरण शुध्द होता है बल्कि अधिक तापमान पर भी नियन्त्रण होता है। ओर उसके साथ वायु के वेग और दिशा को नियंत्रित करते है और साथ ही ध्वनिप्रदूषण को भी कम करते हैं। तभी हमारा पूरा भारत देश सच्चे अर्थ में प्रदूषण रहित हो जायेगा। एक मोटार गाडी 35000 कि. मी. चलकर जितना

प्रदूषण करती है उतना प्रदूषण का अवशोषण एक बडा वृक्ष करता है।

हालहीमें संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के तहत कराए गए सर्वेक्षण के अनुसार विश्व की 90 प्रतिशत से अधिक शहरी जनता अर्थात लगभग एक अरब 90 करोड लोग ऐसे वातावरण में सांस लेते है, जिसमे विषैली गैसें समायी हुई है, वायु प्रदूषण का ही विस्तार है तेजाबी बरसात। तेजाबी वर्षा से पूरा विश्व इस हदतक त्रस्त हो रहा है कि राज्य में 250 से अधिक झीलें मृत हो गई हैं। स्वीडन की करीब सभी झीलें मछलियां विहीन हो गई हैं। कनाडा की भी करीब 2500 झीलें तेजाबी वर्षा से लगभग नष्ट हो गई है। अम्लीय बर्षा से फसल और वन दोनों नष्ट हो रहे हैं। जर्मनी के पश्चिमी क्षेत्रके 30 प्रतिशत वन तेजावी वर्षा से अकाल मौत मर रहे हैं। ब्राजील के अधिकतर वन क्षेत्र अम्लीय वर्षा के शिकार हैं। स्विज्जरलैण्ड के 19 प्रतिशत वनों का नाश लगभग तय लगता हैं। इस तरह हमारे सामने यह चित्र आता है कि तेजावी वर्षा ( वायु प्रदूषण की वर्षा ) के कारण वन का जो अकाल विनांश हो रहा है जो पर्यावरण को उत्तम रखने में प्रमुख सबसे उल्लेखनीय भूमिका निभाते हैं।

वैसे ही वातावरण में दैनंन्दिन जीवन मे अम्लीय गैसों का प्रमाण अधिक होने के कारण विभिन्न प्रकार के पत्थरों से निर्मित इमारत अपनी चमक दिनब दिन खोती जा रही है। ऐतिहासिक स्मारकों की भी शोभा धीरे-धीरे कम होती जा रही है। इसे वैज्ञानिकों ने अपने शब्द में ''स्टोन कैंसर"का नाम दिया है। डॉ. हैमिल्टन ने सन 1975 मे सर्वेक्षण किया उसमे उन्होंने बताया कि पेट्रोलियम और कोयला से निकलनेवाली गैसों से वहा प्रतिवर्ष 7,500 से 12000 तक लोगों की मृत्यु हो जाती है। प्रदूषण के कारण ढेर सारे जीव-जन्तुओं तथा पेड-पौधो की प्रजातियां लुप्त वल्कि विनाश हो गई है और जो बची है उनका लुप्त हो जानेका खतरा है। और उसी प्रकार बढती हुई वृक्षों की अन्धधुंध कटाई से वर्तमान में ये वन शीघ्र नष्ट होते रहे तो हमारे दवाइयों का क्या होगा। उसी प्रकार प्रतिदिन पर्यावरण के प्रदूषित होने की समस्या, गंभीर जटिल होती जा रही है।

पर्यावरण अर्थात प्रकृति परिवेश। पर्यावरण दो शब्दों के संयोग से बना है ''परि'' और ''आवरण"। पर्यारवरण शब्द का अर्थ या उपयोग केवल मनुष्य जाति के लिए नहीं होता है, बल्कि समस्त सजीव के लिए होता है जैसे मनुष्य, पशु, पक्षी, पेड-पौधे, कीड़ेमकड़ी आदि पर्यावरण के अन्तर्गत वे सभी परिस्थितियां आ जाती है जो हमारे जीवनपर प्रभाव डालती है । यही पर्यावरण का संतुलन जब बिगडने लगता है अथवा उसके अंदर गड़बड़ी होती है तो उसका परिणाम बडा ही गंभीर होता है। मोटे-तौर पर वातावरण की निर्मलता का नष्ट होना या बिगड़ जाना ही प्रदूषण है। मनुष्य एक सामाजिक और प्राकृतिक प्राणी है और एक स्वच्छ प्राकृतिक वातावरण में रहने का उसे प्राकृतिक अधिकार है। परन्तु प्रकृति को प्रदूषित करने का उसे कोई अधिकार नही है बल्कि प्रकृति का प्रदूषण रने वाली वस्तुओं से कैसे बचाए रखे तथा पर्यावरण को सच्चा मित्र एवं पर्यावरण प्रदूषक वस्तुओं का पहचाने कैसे यह बहुत महत्वपूर्ण हो गया है।

आज हम इकिसवी सदीमें जी रहे है। उसी वक्त हमारे देशकी जनसंख्या की गणना 100 करोड तक जा चुकी है जो एक विकासशील देश के लिये अभिशाप है। वैज्ञानिक भाषामें बताना है तो हम बता सकते है कि हमारी जनसंख्या राष्ट्र की ''कैरींग कपैसिटी'' से ज्यादा है। उसके उपर सबने मिलके सोचना चाहिये। जनसंख्या का विस्फोट रूकनेके लिये सबको बीडा उठाना चाहिये तभी पर्यावरण सच्चे अर्थमें संतुलित हो जायेगा।

औद्योगीकरण के बारेमें पं. जवाहरलाल नेहरू ने बताया था कि भारत एक औद्योगिक देश होना चाहिये और उनका वो खवाब भी आज २१ वी सदीमें पूराहो गया है । पंरतु आज वक्त यह हमें बता रहा है कि पर्यावाण का संरक्षण करना बहुत जरूरी है और यह सोचकर ही हमें औद्योगीकरण के तरफ झुकना चाहिये। वर्तमान स्थिति में काफी औद्योगिकरण हो गया है और उसके लिये वनोंकी अंधाधुध कटाई हो रही है रास्ता बनाना और बांध परियोजना तैयार कर रहे है उसमे सबसे ज्यादा नुकसान वन का प्रकृति का हुआ है। एक तरफ से कृषिप्रधान देश है तो दूसरी तरफ प्रकृति ने संन्तुलन खो दिया है। भारत एक कृषिप्रधान देश होने के बावजूद भी आज सबसे ज्यादा जलाउ लकडी की कमी ग्रामीण भाग के लोगों को हो रही है। उसके लिये हम सबको जनजागृति करनी चाहिये किहर एक को कमसे कम एक पौधा लगाना चाहिये वही हमारे पर्यावरण को बचायेगा।

वास्तव में पर्यावरण प्रदूषण की वर्तमान स्थिति हमारे समाज का सर्वाधिक भंयकर संकट बन गया है, अतः आज मानव के समक्ष जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है, वह है पर्यावरण का संरक्षण। इसलिये अब समय आ गया है कि पर्यावरण संरक्षण के महत्व को समझा जाए तथा पर्यावरण को और अधिक प्रंदूषित होने से बचाने के लिए प्रयास सामूहिक रूप से अविलम्ब शुरु कर दिया जाए। विकास एवं वैज्ञानिक प्रगति के नाम पर मनुष्य स्वयं को प्रकृति से दूर करता जा रहा है। उम्मीद है ''मिटटी का घड़ा''उसे प्रकृति को समझने के साथ-साथ उसके प्रदूषण रहित करने का प्रयत्न करेगा। अपनी सुख सुंविधा के सामने परितंत्र संतुलन का मानव के लिए कोई कीमत नहीं है। मानव सम्पूर्ण जीव जगतके शीर्ष पर है और अपनी संख्या निरन्तर बढाए जा रहा है। इस धरती पर सातवँ आदमी भारतीय है। इससे यह स्पष्ट है कि संसार की जनसंख्या का 16% और समस्त भूभाग का मात्र 2.4% है।

महात्मा गाँधीने 60 वर्ष पूर्व कहा था कि औद्योगीकरण में पश्चिम की नकल करने से भारत को भगवान बचाए। एक छोटे से देश का अधिक साम्राज्यवाद आज संसार को बेड़ियों से जकड़ रहा है। आज हमारे लिए आपने कार्य कलापों की समीक्षा करने का वक्त आ गया है । सभी देशों के लोग आज यह सोचने को विवश हैं कि धरती की प्राकृतिक सम्पदा कैसे बचाएं एवं सजीव सम्पदा की रक्षा कैसे हो। यह भी याद रखना है कि सजीव सम्पदा के अस्तित्व में अन्य प्राकृतिक सम्पदा की अहम भूमिका है। प्रकृति की रक्षा में हमारी तत्परता और बदले में प्रकृति से होनेवाले लाभ का अनुपात लगातार बढता रहे तो हमारी सभ्यता उत्कर्ष के शिखर पर आसीन

होने की दिशा में बढ़ेगी । आज पर्यावरणीय मामले राष्ट्रीय स्तर के नहीं बल्कि विश्वव्यापी है । आज विज्ञान का ध्यान जैवीय विविधता पर केन्द्रित हो रहा है। आज प्रयोगशाला के बाहर एवं अंदर संरक्षण की दिशा में नित्य नये प्रयोग हो रहे हैं । विज्ञान हमे कुछ नई चीजें देता है जिनसे प्रकृति को असुविधा होती है। प्रकृति अत्यंत क्षमाशील होते हुए भी आज विवशता में निष्ठूर होती जा रही है। सम्पूर्ण मानव जाति निष्ठा के साथ जैवीय विविधता के संरक्षण पर ध्यान दें तो प्रकृति फिर क्षमाशील होगी। इसीलिये भारत सरकार के पर्यावरण विभाग द्वारा ''प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की रचना के साथ ''वृक्षारोपण'' के कार्यकम को अधिक महत्व दिया जा रहा है। नैसर्गिक वनों की कटौती रोकने एवं उनके संरक्षण हेतु विविध 650 अभयारण्य 149 राष्ट्रीय उद्यान, 15 जीव परिमंडल की स्थापना की गई हैं।

अतः अतं मे यह सूचना आवश्यक लगती है कि पर्यावरणवादि को ''राम'' की भूमिका निभानी होगी ताकि अपने धैर्य से वे प्रदूषण के ''रावण'' को समाप्त कर सकें। इसी मानस के विकसितरुप से ही भविष्य का भारत खुशहाल होगा। तो आइए ऐसे पौधों का संरक्षण की दृष्टि से हम सब इस पवित्र राष्ट्र कार्य मे सम्मिलित हो एवं व्यक्तिगत व सामाजिक रूप से पर्यावरण के नियंत्रण एवं प्रबंधन कार्य में अपना योगदान दें । यदि सभी मानव ने अपने आसपास के पर्यावरण को शुध्द रखने को प्रयत्न किया और पर्यावरण दूषित करने वाले तत्वोंका नाश किया तो ''प्रदूषण'' की चिन्ता कम हो सकती है। इसलिये शायद किसी कविने कहा है ''पर्यावरण से नाता जोड़ो, प्रदूषण की चिन्ता छोड़ो''।

# भूटान : पर्यटक के दृष्टिकोण से

*विजय कृष्ण*
*पटना*

धरती पर प्राकृतिक सौंदर्य ईश्वर की देन है। उसी सुन्दरता को संजो हुए एक देश है भूटान जो नार्थ बंगाल के समीप एवं सिक्किम के पूरब में है।

इस देश में प्रवेश करने के पूर्व विसा (VISA) की आवश्यकता प्रत्येक नागरिक को पड़ती है, जिसे फून्सिलिंग में भारत के राजदूत के तहत (Liason Officer ) लाइजन अफिसर से लेना पड़ता है। तभी उस देश में प्रवेश किया जा सकता है, अन्यथा नहीं।

इस नवीन मिलेनियम के मार्च महीने में हमें अपने परिवार के सदस्यों के साथ भूटान भ्रमण करने का आनन्द प्राप्त हुआ जिसका वर्णन करना मैं उचित समझाता हूँ जिससे कि इच्छुक पर्यटक उसका लाभ उठा सके।

इस देश में प्रवेश करने के साथ ही इसकी प्राकृतिक सुन्दरता, हिमाच्छादित पर्वत माला, उससे निकलती शीतल नदियॉ एवं झरने तथा वन सम्पदा बरबस ही मन को लुभाती चली जाती है।

हमलोगों की यात्रा पटना से रेल द्वारा आरम्भ हुई। दूसरे दिन हमलोग न्यू अलीपूर द्वार उतर गये। यहाँ से सड़क मार्ग से फून्सिलिंग पहुँचने में करीब दो घंटे लगते हैं। यही भूटान का प्रवेश द्वार है। हमारी इस सम्पूर्ण यात्रा में हमारे सुपुत्र डा. अजय कृष्ण के एक परम मित्र का बहुत ही सौहार्द्रपूर्ण सहयोग मिला जिससे यह यात्रा हमारे लिये यादगार बन गई।

फून्सिलिंग में दो घंटे के अवकाश के बाद तरोताजा होकर हमलोग ''हा" (Haa ) के लिए प्रस्थान किये जो लगभग वहाँ से 265 कि. मि. दूर और 1,500 फीट की ऊँचाई पर है। लगभग 35-40 मिनट की यात्रा के बाद ही हल्की चढ़ाई शुरू होती है। हरियाली से भरे हुए टेढ़े-मेढ़े सड़कों से आगे बढ़ते हुए ऐसा प्रतीत होता है मानो स्वर्ग के सोपान की ओर कदम बढ़ा रहे हो । इस यात्रा में अनगिनत मनमोहक दृश्यों, ऊँचे-ऊँचे पेड़ो, पर्वतों, रंग-विरंगी चिड़ियों, तितलियों, झूमते फूलों, कलकल करती झरनों ने हमें ऐसा लुभाया कि हम आश्चर्य-चकित हो गये।

मौसम साफ था, धूप खिली थी, फिर भी जैसे-जैसे ऊपर बढते गये ठंडी हवा के झोकों ने शरीर मे सिहरन पैदा करना शुरू किया। तीन घंटे की यात्रा के बाद विश्रामस्थल ( जे. के. पी. ) में हमने चाय, जलपान किया फिर आगे बढ़े। चारो ओर के मनमोहक दृश्यों ने यात्रा को सुखद बना दिया था ।

हरियाली के आवरण में लिपटे ऊँचे-ऊँचे पर्वतों एवं उनके आरपार तैरते बादलों का अचानक प्रकट होना अवाक कर देता है। नीचे खाइयों में प्रवाहित होते झरने सबको आकर्षित करते हैं।

दोपहर को चिमाकोठी में भोजन करने के उपरान्त फिर यात्रा शुरू हुई और शाम को चार बजे हमलोग ''हा'' पहुंचे। ''हा चू'' नदी के नाम पर ''हा'' आर्मी चेक पोस्ट है। बस से उतरते ही ठंढी हवा ने शरीर मे कंपीकंपी पैदा कर दी। हालांकि हम गरम जैकेटों से लदे थे फिर भी कांप रहे थे। रात को तापमान यहां शून्य से तीन/चार डिग्री नीचे चला जाता है।

यहां हम अपने सुपुत्र के मित्र के घर थे। घर के अन्दर यहां भूटान में बुखारी जलाई जाती है। प्रत्येक कमरे के बीचो-बीच यह टिन का बना रहता है जिसमे लकडी जलती है और धुआँ चिमनी से बाहर चला जाता है। इससे कमरा काफी गरम रहता है।

यह बहुत ही छोटा केन्टौनमेन्ट एरिया है जिसमें मुश्किल से पाँच सौ के लगभग आबादी है। सभी भूटिया लोग हैं आर्मी को छोड़कर हर घर के नीचे के कमरे में दुकान हैं, जो विदेशी वस्तुएं बेचते है, और उपर मंजिल में खुद रहते हैं। लगभग सभी मकान मिट्टी और लकडी से मिलजुल कर बने हैं। नक्काशीदार लकड़ी की खिडकियाँ सब घरों की एक जैसी लगती है।

दूसरे दिन हमलोग ''हा'' से और ऊपर डामथंग जो कि समुद्रतल से लगभग 11,000 फीट की ऊँचाई पर है, और उत्तर-पश्चिम की तरफ है, घूमने गये। यहाँ डामथंग में सड़क समाप्त हो जाती है और यहां चीन देश सिर्फ नौ घंटे की पैदल यात्रा पर है। यहाँ चारो तरफ बर्फीली पहाड़ियाँ थी, बीच-बीच में ढ़लानो पर ''याक'' (Yak) चर रहे थे। यहाँ हमने स्नो फाल का आनन्द भी लिया।

समय कैसे बीतता गया पता ही नहीं चल रहा था। हमारी यात्रा के दूसरे चरण में अगले दिन सुबह 'पारो' के लिए प्रस्थान किये। यह स्थान 'हा' से लगभग 65 कि. मि. है।

यह सुन्दर शहर पारो चू (नदी) द्वारा दो भागों में बंटा है। यही पर ड्रक इन्टरनेशनल एअर लाईसेंस का हवाई अड्डा है। यहाँ के दर्शनीय स्थानों में संग्रहालय है जो छ : मंजिला है। 3 मंजिले जमीन से उपर और तीन मंजिले नीचे । यहाँ भगवान बुद्ध की विभिन्न मुद्राओं की मूतियाँ, भूतपूर्व भूटान नरेशों की उपयोग की वस्तुएँ मुद्रायें, आभूषण, वस्त्र, अस्त्र-शस्त्र,इत्यादि देखने योग्य वस्तुएं हैं।

दर्शनीय स्थानों में कई गुफाएं हैं, जिसमें भगवान बुद्ध की विभिन्न मूद्राओं में मुर्तियाँ हैं और जहाँ रात-दिन मक्खन के दीप जलते रहते है। यहीं पर हमें सीचू मेला देखने को मिला जिसे देखने विदेशी यात्री भी यहां आते हैं। यह वर्ष में एक बार तीन दिनों के लिए लगता है। जिसमें लोग मुखौटे पहन कर नाचते हैं। हजारो की संख्या में लोग यह मेला देखने आते हैं।

रात्रि में जगमगाती एयरपोर्ट की रोशनी में पारो शहर की छटा और भी निखर आती है मानो

पहाड़ीं पर हजारों जुगनों बैठे हों।

यात्रा के अंतिम चरण में अगले दिन हम थिम्पू पहुँचे। यह भूटान की राजधानी है। यह पारो से लगभग 80 कि.मि. है। पहाड़ की तलहटी में बसा यह शहर दूर से ही सुन्दर, सलोना और आकर्षक लगता है। शहर के मध्य में एक विशाल भवन है जिसे जौंग (Secretariat )कहते हैं। इसके पास ही थी चू नदी बहती है। नदी के दूसरी पार सार्क हाऊस नाम की भव्य इमारत है जिसका निर्माण सार्क देशों के मिटिंग के पूर्व हुआ था।

यहाँ पर भी बहुत सारी गुफाएँ हैं। यहाँ बौद्ध धर्म को मानते हैं। मंदिरो के बाहर चबुतरों के चारो ओर प्रार्थना चक्र (Prayer wheels ) है जो गिनती में एक सौ आठ होते हैं। इनमें मंत्र अंकित है और ऐसा विश्वास है कि इन्हे घुमाने से मनोकामना की पूर्ति होती है। लम्बे बाँसों में रंगीन कपड़ों के झंडे जिन्हें 'तनखा' (Prayer flags ) कहते हैं हवा में लहराते रहते है। बौद्ध ग्रंथ सें ली गई प्रार्थनाए इनमें छपी रहती है।

विशेष दर्शनीय स्थानों मे राजकीय अतिथि भवन, भूटान नरेश और उनकी रानियों के भव्य पैलेस ( जो दूर से ही देखा जा सकता है) (view point ) (व्यू प्वाइंट) सबसे ऊँचा स्थान है जहाँ से पूरा थिम्पू शहर देखा जा सकता है। यहाँ के बाजारों में विदेशी वस्तुएं बिकती है जो काफी मंहगी है।

अगले दिन हमलोग अपनी वापसी यात्रा में शाम को फूंसिलिंग पहुंचे और यहा से पटना वापस आ गये।

वैसे तो प्रत्येक पहाड़ी स्थानों की अपनी-अपनी सुन्दरता एवं महत्व होता है, हिमाच्छादित पहाड़ियाँ, प्राकृतिक सौन्दर्य और वन सम्पदा की प्रचुरता से भरपूर भूटान का अपना अलग ही एक आकर्षण है, जिसके लिए भूटान भ्रमण करने को विदेशी पर्यटक हमेशा ही लालायित रहते हैं।

## भूटान की वनस्पति

कुछ पौधे मूटान में विभिन्न तलहटी से ऊपर की और पाई जाती है । फुन्सिलिंग से ज्यों ज्यों पहाड़ों व नदियों से उपर की ओरबढेंगे ये वृक्ष आपका स्वागत करेंगे ।

प्रथम चरण में Dualianga Englehardtia Ficies : इससे ऊपर Pandanus Ficies Magnolea, Silver fir, Hernlock, Juniper, Carch (Larixgrittithiana) Rhododendron आदि।

पहाड़ों के ढलानपर Primula primuleria के असंख्य वृक्ष । अप्रिल-मई में इनमें आकर्षक सफेद बैगनीफूल खिलते हैं आर्किड की अनेक प्रजातियाँ, जैसे–Vanda Oberonea, Dendrobium Calanthe Halieneria आदि ।

# ''पर्यावरण समाचार''

*संजीव कुमार*
*मुख्यालय, भा.व.स.*
*कोलकाता*

1. भुवनेश्वर के निकट 450 हेक्टयर में फैले नन्दनकानन प्रणि उद्यान में यकायक 10 से अधिक बाघ मारे गये। पोस्टमार्टम से पता चला कि इन बाघो की मृत्यु ट्राइपैनोसोमियॉसिस रोग से हुई। यह संक्रमक रोग है। जिससे तापमान एकदम बढ़ जाता है। फलस्वरूप बाघ या तो दौरा पड़कर या खून की उल्टी या फिर दस्त से मारा जाता है। इस रोग से 1917 में कलकत्ता में अलीपूर चिड़ियाघर में सात बाघो और एक तेंदुआ की जान गई थी। इसके पीछे प्राणि उद्यानों में कुप्रबन्ध को जिम्मेदार ठहराया गया। इस रोग से सफेद बाघों की मृत्यु अधिक हुई। क्योंकि कृत्रिम प्रजनन से उत्पन्न सफेद बाघों में प्रतिरोध क्षमता अपेक्षतया कम होती है।

2. हम अपने स्वार्थ के लिए वन्यजीवों को घोड़ले से मारते है। जिम कार्बट पार्क में वन्यजीव तस्करों ने हाथी-दांत के लिए क्ई हाथियों की जान ले ली। बताया जाता है कि ये दांत भारत में ही 10,000/- रूकिलो बिक जाता है। 1998 के मुकावले 1999 में पार्क में 127 हाथी कम मिले।

3. राजस्थान के जैसेलमेर में भारत पाकिस्तान सीमा पर सीमा सुरक्षा बल ने एक बाज पकड़ा, जो एक छोटे एंटिना और एक शक्तिशाली रेडियो ट्रांसमीटर से लैस था। बाजो का इस्तेमाल केवल सीमा पर जासूसी के लिए नहीं किया जाता है बल्कि अन्य कार्यो के लिए किया जाता है। उत्तर प्रदेश के उन्नाव कस्बे से वन्यजीव अधिकारियों और पुलिस अधिकारियों ने 20 लाख रूपए के बाज बरामद कि ए। बाजदारी प्राचीन खेल है पश्चिम एशिया के धनी शेख अपने खेल के लिए मुहमांगा दाम देते है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस पक्षी की कीमत 80,000/- रुपए से 7 लाख रुपए तक हो सकती है जो पक्षी की प्रजाति और खरीददार पर निर्भर करती है। उत्तर प्रदेश, जहां पक्षियों की 681 प्रजातियां है बाजों का कुदरती घर है।

4. उड़ीसा के गहिरमाथा समुद्रतट की सुनहरी रेत पर मौत के बदनूमा दाग नजर आने लगे है। अभी हाल तक वहां के नरम रेतीले टीलों में जीवन धड़कता था। ये टीले ओलिव रिडले कछुओं के लिए उष्ण और उर्वर गर्भस्थल का काम करते थे, जो रात के अंधरे में समूद्र से बाहर निकलकर यहां अपना अण्डा देते है। जेुरसिक काल की ऊत्पति माने जाने वाले ये जीव किसी पुरातन रिवाज को तरह हजारों क्ई बार स्थिति अच्छी होने पर लाखों की संख्या में आकर पूरे तट को जीवन्त बना देते थे । किन्तु इन तटों में मुख्यतया ट्रालर केआने से इनके नाइलोंनके जालों में फंसकर हजारो हजारो कछुए प्रतिवर्ष दम तोड़ देते है । नये बन्दरगाह और अधिक बस्तियों के

कारण भी कच्छुए मारे जा रहे है। नाइलोंन में फंसकर अब तक 16,000 कछुओं की मौत दर्ज की गई है।

5. गंगा के उपजाऊ मैदानी इलाके से नेपाल की सीमा से लगे तराई वाले हरे-भरे क्षेत्र तक 8,400 वर्ग कि.मि. में फले उत्तर बिहार के शीशम के बागानों में महामारी फैली हुई है। पहले पत्तियां भूरी पड़ती है, फिर टूट जाती है। उसके बाद पेड़ सूख जाता है शेष बचता है सूखे, वीरान पेड़ो का एक भयावह दृश्य। जिससे इलाके की आर्थिक स्थिति बदतर हो गई है। वहां के स्थानीय लोग कहते है कि पेड़ को कैंसर हो गया। शुख्आती जांच से पता चला है कि यह रोग संभवत फफूंद से फैला है। दरअसल, वे फ्युजैरियम सोलैनी नामक फफूंद की बात कर रहे है जौ आमतौर पर टमाटर बैंगन आलू आदि में रोग फैलता है। यह महामारी पर्यावरणविदों के लिए दु:स्वप्न साबित हुई है। उनका निष्कर्ष है कि ऐसे एक ही किस्म के पेड़ो की कतार ( यानी पूरी जमीन पर सिर्फ एक ही तरह के पेड़ उगाना) व्यवसायिक उद्देश्य से देखें तो मोनोकल्चर-पारिस्थिकीय विनाश को आमन्त्रण दे रही है । ऐसे पेड़ को पसन्द करने वाले कीट या सूक्ष्म परभक्षी इसके जंगल के जंगल साफ कर डालेगे। इसलिए बिहार मे सर्वाधिक क्षंति शीशम के कृत्रिम जंगलों वाले इलाके में हुई।

6. मध्य प्रदेश में झाबूआ के आदिवासियों के लिए जंगल रोजी-रोटी का इकलौता साधन है। वे अधांधुध पेड़ काटकर अपने पैरो पर कुल्हाड़ी मारते रहे। लेकिन प्रशासन के प्रगतिशील योजनाओं ने तीन वर्षों में स्थिति बदल कर रख दी है। वे इतने सचेत हो गए है कि करीब 1,200 आदिवासियों ने वन विभाग के अधिकारियों के समक्ष अपने कुल्हाड़ी डाल चुके है । 210 प्रगतिशील वानिकी योजनाओंमें आदिवासी भी शामिल है यही कारण है 1992-93 में पेड़ काटने के अपराध में 1,412 पकड़े गए थे। 1994-95 में यह संख्या घट कर 676 रह गई 1995-96 में यह संख्या इससे भी आधी रह गई। झाबुआ रेंज के एक अधिकारी कहते है पहले रोजआना पेड़ काटने के अपराध में एक आदिवासी को पकड़ते ही थे पर जे एफ एफ योजना के शुरू होने के बाद एक भी मामला ऐसा नही आया।

7. हल्दी के ओषधीय गुणों से हर भारतीय परिचित है। हमारे आयुर्वेदाचार्य जिस हल्दी को शताब्दियों से जानते है उसका भी पेटेट अमेरिका ने 1995 में हासिल कर लिया था। मतलब हल्दी से बनी हर ओषधि पर उनका विशेषाधिकार हो गया और वे इससे लाखों डालर कमाने की स्थिति में होगए। लेकिन (सी. एस. आइ, आर) ने अमेरिका पेटेंट आफिस से इस मामलें की समीक्षा करने की अपील की। अमेरिका पेटेंट खारिज कर दिया। यह एक बड़ी जीत है क्योंकि जारी किए गए पेटेंट को शायद ही खारीज किया जाता है। सी. एस. आइ. आर. ने एक टीम बनाई है जिसने 400 जड़ी-बूटियों की पहचान की है। अब वे उसका पेटेंट कराने की कोशिश कर रहा है।

8. कलकत्ता बन्दरगाह की हालत कमोड की सी हो गई है। उसमें भाटी तलछट जम गई है। इसकी सफाई के लिए पड़ोसी देश भूटान से टंकी मिली। वहा संकोष बान्ध से 160 किमी लम्बी और 200

मी. चौड़ी नहर के जरिये तेजी से पानी फरक्का बान्ध से छोड़ा जा सकता है पर इससे बक्सा बाघ ऊद्यान व अन्य दो अभयारण्य और तमाम तरह की वनस्पति नष्ट हो जाएंगे । लुप्तप्रायः वन्य प्राणियों को खतरा पैदा हो जाएगा। एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में करीब 5500 कि.मी. जंगल गायब हो गए। 40,000 वर्ग कि.मी. पर अतिकमण के कारण उनका क्षरण हो चुका है। विभिन्न राज्यों में अधिसूचित वन भूमि का दर्जा खत्मकर दिया जा रहा है। इन्हीं कारणों से वनस्पति और जंगली जानवरों का नाश हो रहा है जैसे कच्छ क्षेत्र में 1000 से भी कम जंगली गधे बचे है,. जहां नमक उद्योग पांव प्रसार रहा है। गंगा की डाल्फिन जो कभी समुद्र में नही जाती बान्धों प्रदूषण और शिकार के कारण खतरे में है । 16 वर्ग कि.मी. के कीबुल लामजाओं राष्ट्रीय उद्यान में अब केवल सिर्फ 50 संगाई बचे है। दुगोंग धीमें चलने वाली समुद्री गाय तटीय गुजरात के उद्योगो के चलते नष्ट हो सकते है। कर्नाटक के काड़वार में एक बान्ध और परमाणु बिजलीघर की स्थापना के लिए उष्णकटिबन्ध वनों के 40,000 पेड़ काट दिए गए है।

9. भुवनेश्वर के पास 480 एकड़ फैले एक पौध शोध केन्द्र की स्थापना 1985 में हुई थी। यह केन्द्र हरियाली के अकूत भण्डार से देश में नागफनी का सबसे बड़ा संग्रहालय भी बन गया है। विश्वभर में नागफनी की उपलब्ध 1200 प्रजातियों में से 550 प्रजातियां इस शोध केन्द्र में है। साथ ही यहां के वनस्पति विज्ञानियों ने इनकी 1050 संकर प्रजातियां भी विकसित कर ली है। आखिरी गणना के समय पौध शोध केन्द्र में नागफनी के करीब 2 लाख पौध है। इस पौध शोध केन्द्र नागफनी की अपनी विकसित की हुई नई प्रजातियों की बड़े लोगों का नाम देकर प्रसिद्ध बना दिया है। ये नाम प्रधान मन्त्री, मुख्य मन्त्री, संतया वैज्ञानिक हो सकते है। यहां नागफनी के नाम मदर टरेसा, हिलेरी किलन्टन, राजकुमारी डायना अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन के नाम पर है। प्रसिद्ध विज्ञानी एम. एस. स्वामीनाथन के नाम पर एक नागफानी है। एक नागफनी का नाम अटल रखा गया है।

10. विश्व की सबसे उॅची चोटी ''एवरेष्ट'' आधुनिक पर्वतारोहण उद्योग की धमक के आगे प्रकृति की रमणीयता फीकी पड़ गई है। यह पर्वत स्थल अब खाली सिलिन्डरो तंबुओं के तुड़े-मुड़े खम्बों और फटी तिरपालों तथा मरने वालों के शवों से अटा पड़ा है। अब इसे विश्व का सबसे उॅचा कचरा पात्र का दर्जा दिया गया है। पूरा एवरेष्ट क्षेत्र करीब 100 टन कचरे और पर्वतारोहण के बेकार हुए सामान से भरा पड़ा है। 2001 के मई माह तक एवरेष्ट क्षेत्र से 7000 किलों से अधिक कचरा बटोर कर नीचे लाया गया । यह पर्वतीय पारिस्थितिकी तन्त्र के लिए घातक है क्योंकि वहां जैविक गतिविधि चलती नहीं। उतने स्थल में शून्य से 60 नीचे के तापमान में न कोई चीज सड़ती है न उसका स्वरू बदलता है। नेपाल पर्यटन बोर्ड एवरेष्ट में कर्मचारी भेजकर 4,113 किलो कचरा नीचे उतारा। 8000 मीटर की उॅचाई में चढ़कर 2,113 क्षरणशील कचरे को नष्ट कर दिया गया। इस कचरा प्रदूषण को दूर करने के लिए कानून न बनाया गया तो एवरेष्ट इलाके में पर्यावरणीय संतुलन बिगड़ जाएगा ।

11. देश की गाड़ियों और औद्योगिक संयन्त्रों से निकले गहरे काले धुएं से आंखे जलने लगती है और फेफड़े कालिख की खतरनाक महीन परत से ढक जाती है।नागपुर स्थित राष्ट्रीय पर्यावरणीय इंजीनियारिग शोध संस्थान (नीरी) के निदेशक कहते है ''हमारे शहरों की हालत शोचनीय हैं, यही हालात बरकरार रही तो सांस लेने लायक हवा नहीं मिलेगी। देश के हर महानगर में सांस के साथ 10-20 सिगरेटों के बराबर धुंआ रोजाना आपके शरीर में पहुॅच रहा है। विश्व बैंक के इस साल जारी रिपोर्ट के अनुसार देश में हर साल 40,000 से ज्यादा लोगों की मृत्यु वायु-प्रदूषण की वजह से अकाल मृत्यु हो जाती है। हाल के अध्ययन से पता चलता है कि इस दशक के शुरूआत के मुकावले श्वास संबंधी रोग और एलर्जी के मामले दोगुणे गए है। मुंबई का गैस चैंबर कहे जाने वाले पूर्वो उपनगर चेंबुर में प्रदूषण सीमा से 10 गुण ज्यादा है यहाँ एक 10 माह की लड़की की मृत्यु 15 मिनट के अन्दर सांस फूलने से हो गई। चिकित्सक के अनुसार सारा कसूर चेंबूर की जहरीली हवा का है। दरअसल देश के महानगरो में सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था ध्वस्त हो गई है व उंसका स्थान दूपहिया और तिपहिया ने ले लिया है जो कुल प्रदूषण का आधे से ज्यादा के लिए जिम्मेदार है। सबसे घातक प्रदूषण पेट्रोलचालित कारों और दुपहियों गाड़ियों से निकलता है। टू-स्ट्रोक वाले दुपहिए और आटोरिक्सा सबसे अधिक प्रदूषण फैलाता है। भारत मे इनकी संख्या 30 लाख है। स्मरण रहे कि दूपहिया और तिपहिया वाहन किसी कार की तुलना से छह गुण ज्यादा हाइड्रोकार्बन और तीनगुण ज्यादा अनावश्यक तत्व छोड़ते है। पूरी तरह से दहन न हो पाने के कारण प्रदूषण बढता है। न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह ने नाराजगी जताते हुए कहा कि सभी तिपहियो को सड़को पर आने से रोक दिया जाए। उन्होने पूछा कि वातावरण बेहतर होने तक क्या नई गाड़ियों का पंजीकरण रोका नही जा सकता।

12. पटाखों के शोर और जहरीले धुएं का नाक और गले पर स्थाई और अस्थाई दोनो प्रभांव होते है 85 से 90 डेसिबल तक की ध्वनि का आमतौर पर कानों पर प्रतिकूल असर नहीं होता पर पटाखों का 125 डेसिबल और उससे अधिक ध्वनि के मात्र एक सैंकिड से ही कान पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते है। इससे गंभीर बात यह है कि 125 डेसिबल या उससे अधिकस्तर की ध्वनि गर्भवती महिला और गर्भस्थ शिशु के दिल की धड़कन बढ़ सकती है और प्रतिकूल परिस्थितियों में अचानक गर्भपात भी हो सकता है।

( इंडिया टुडे से )

# प्रदूषण का बढ़ता माया जाल

*भोलानाथ*
*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण*
पोर्ट ब्लेयर

मानव विकास की यात्रा में, प्रदूषण का दबाव बढ़ा कब से।
है आविष्कार प्रगति की जननी, इस ज्ञान का पाठ पढ़ा जब से।।
जग की जनसंख्या का विशाल, आकार सामने खड़ा हुआ।
उद्योगों की बाढ़, शहरों की भीड़, इनसे प्रदूषण बड़ा हुआ।।
अवाशिष्ट और अवसादों को जग नदियों में छोड रहा कब से।
है आविष्कार.....से।।
रेलों-सड़कों का जाल बिछा, जग समय की गति से भाग रहा।
यों प्रदूषण के थपेड़ों से घायल, फल-फूल-कली,हर बाग रहा।।
वाहनों से निकला धुआं आदि, परिवेश में छोड़ रहा कब से।।
है आविष्कार.....से।।
धरती पर बढ़ा प्रदूषण, अति उच्च शिखर को चूम रहा।
जो प्रगति और परिवर्तन की ही, पहियों के संग घूम रहा।।
वायु-मृदा-जल के ऊपर ही, भरपूर प्रभाव पड़ा कब से।
है आविष्कार.....से।।

यदि पहले से प्रयास किया होता, क्यों बढता जाल प्रदूषण का।
क्यों प्राणि जगत पीडित होता, क्यों बढ़ता रोग कुपोषण का।।
जो बै-लगाम, बैहाल किया जग, ऐसा मजबूत बना कब से।
है आविष्कार.....से।।

यों अद्‌भूत प्रगति किया जग ने, उन्नीसवीः सदी जाते-जाते।
कट गये वृक्ष, सिमट गये जंगल, बीसवीं सदी आते-आते।।
इक्कीसवीं सादी में क्या होगा, जब धुम्र का धुन्ध बढ़ा अब से।
है आविष्कार.....से।।

कुछ बने व्यवस्थायें ऐसी, जिससे कि प्रदूषण सुलझ सके।
जो प्रकृति के भीतर झांक सके, जग की त्रुटियों को समझ सके।।
प्रकृति की सुन्दर झांकी से, वृक्षों का कटाव बढ़ा कब से।
है आविष्कार.....से।।

इंटसिया बिजुगा (कोलब्रु.) ओ. कुंजे (छाया चित्रः पी वी श्रीकुमार)

स्ट्रॉंगीलोडन लुसिडस (फॉर्स्ट.) सीमैन (छाया चित्रः पी वी श्रीकुमार)

# विज्ञान सम्मेलन (अगस्त 2002)

मुख्य अतिथि श्री एन. डी. दयाल, मुख्य महाडाकपाल को पुष्पगुच्छोपहार

डा० एम.संजप्पा, निदेशक, भा.व.स. को पुष्पगुच्छोपहार

सम्मेलन में वक्तव्य देते मुख्य अतिथि श्री एन. डी. दयाल

सम्मेलन में वक्तव्य देते निदेशक, भा.व.स.

सम्मेलन में वक्तव्य देते डा० आर. के. चक्रवर्ती, पूर्व अपर निदेशक, भा.व.स.

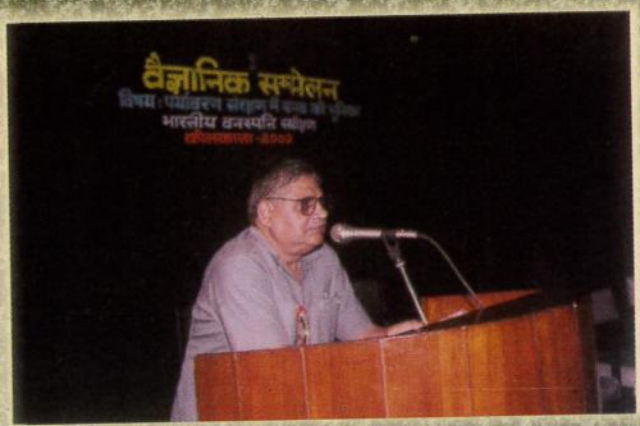


सम्मेलन में वक्तव्य देते डा० आर. डी. दीक्षित, अपर निदेशक, भा.व.स. इलाहाबाद

निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पी-8, ब्रेबोर्न रोड, कोलकाता-700 001, द्वारा प्रकाशित
एवं इम्प्रिन्टा, 243/2 बि, ए.पि.सि. रोड, कोलकाता-700 006, फोन-354 3424 द्वारा मुद्रित